स्वतंत्रता संग्राम के
जनजातीय योद्धा

राजकुमार गुप्ता-रेवाकिंकर

स्वतंत्रता संग्राम के
जनजातीय योद्धा

लेखक

राजकुमार गुप्ता-रेवाकिंकर

आजीवन सदस्य जिला पुरातत्वीय संघ, जबलपुर
प्रदेश उपाध्यक्ष श्रमजीवी पत्रकार परिषद, मध्यप्रदेश

सहलेखक

डॉ. रश्मि खरया

अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक, भोपाल
एम.ए. सोशयालॉजी, एम.एस.डब्ल्यु, एम फिल
नेट सिलेक्ट-डिप्लोमा इन एड्स, पी.एच.डी., आर.डी.वि.वि जबलपुर

प्रधान सम्पादक

डॉ. विकास दवे

प्रकाशक

साहित्य अकादमी

मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, मध्यप्रदेश शासन
संस्कृति विभाग, भोपाल

स्वतंत्रता संग्राम के

जनजातीय योद्धा

राजकुमार गुप्ता रेवाकिंकर

सर्वाधिकार
लेखक एवं प्रकाशकाधीन

प्रकाशक
साहित्य अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, संस्कृति भवन,
बाण गंगा चौराहा, भोपाल (म.प्र.)
दूरभाष : 0755 : 2554782

संस्करण : **प्रथम 2022**

मूल्य : **रुपये 200/-**

आकल्पन : **राकेश सिंह**, भोपाल

डिजाइन : **कैलाश मेहरा**, भोपाल

चित्र संकलन : **अर्घ्य खरया**, भोपाल

मुद्रण
मध्यप्रदेश माध्यम
अरेरा हिल्स, भोपाल (म.प्र.)

उषा बाबू सिंह ठाकुर
मंत्री
संस्कृति,पर्यटन, अध्यात्म
मध्यप्रदेश

निवास : बी-20, चार इमली,
भोपाल पिन-462016
दूरभाष क्र. : 0755-2551976, 2777723

पत्र क्रमांक 3465/मंत्री/सं.प.आ./2021
भोपाल दिनांक 24/12/2021

संदेश

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपके द्वारा लिखित पुस्तक 'स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानी जनजाति के योद्धा' स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ पर प्रकाशित हो रही है।

मेरी ओर से आपकी पुस्तक ''स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानी जनजाति के योद्धा'' के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएं।

(उषा बाबू सिंह ठाकुर)

तुलसीराम सिलावट
मंत्री
जल संसाधन विभाग
मध्यप्रदेश शासन

कार्यालय : ई-105, मंत्रालय,
वल्लभ भवन, भोपाल (म.प्र.)
दूरभाष: 0755-2708000, 2708579 मंत्रालय
0755-2770120 निवास
पत्र क्रं. 4005/मंत्री/ज़.सं./म.क.तथा
मत्स्य वि 2021
भोपाल, दिनांक 27/12/2021

संदेश

बहुत हर्ष का विषय है कि आपके द्वारा स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानी जनजाति के योद्धा नाम की 14वीं पुस्तक, प्रकाशन हेतु तैयार की गई है। स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ पर उक्त पुस्तक का प्रकाशन बलिदानी योद्धाओं की गरिमा को बढ़ाने एवं जनमानस हेतु अत्यंत प्रेरणादायक साबित होगी।

आपके द्वारा लिखित उक्त पुस्तक के प्रकाशन की मेरी शुभकांनायें।

(तुलसीराम सिलाबट)

विश्वास कैलाश सारंग
मंत्री
चिकित्सा शिक्षा
मध्यप्रदेश शासन

निवास : सी-12, स्वामी दयानंद नगर, 74 अंगले, लिंक रोड-1, भोपाल-462003 (म.प्र.)
कार्यालय : 0755-2441017, 2441784
क्रमांक 1226, दिनांक 03/01/2022

संदेश

अत्यंत हर्ष का विषय है कि श्री राजकुमार गुप्ता जी द्वारा अपनी 14वीं पुस्तक 'स्वतंत्रता संग्राम के आदिवासी योद्धा' का प्रकाशन स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ पर किया जा रहा है।

भारत में स्वाधीनता का अंकुर स्वतंत्रता प्रिय जनजातियों के बीच ही अंकुरित हुआ। वनों और पर्वतों में रहने वाली जनजातियों की जनजातीय चेतना ने अंग्रेजों सहित हर आततायी, निरंकुश और आक्रमणकारी सत्ता के विरुद्ध निर्लिप्त संघर्ष किया। हजारों जनजाति नायकों ने देश की आजादी के लिए बलिदान दिया था। ऐसे योद्धाओं का वर्णन इस पुस्तक में किया गया है। पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

शुभकामनाओं सहित,

(विश्वास कैलाश सारंग)

डॉ. नरोत्तम मिश्र
मंत्री
गृह, जेल, संसदीय कार्य, विधि
मध्यप्रदेश शासन

निवास कार्यालय- बी-6,
चार इमली, भोपाल
कार्यालय : 0755-2459963, 2459777

संदेश

प्राचीन काल से ही विदेशी आक्रांताओं के भारत पर आक्रमण एवं परतंत्रता के विरोध में जनजाति आदिवासी समुदाय प्रखर संघर्ष करता रहा है। इन्होंने हर स्वतंत्रता संग्राम के महायज्ञ में अपने प्राणों की आहूतियाँ दीं हैं। ब्रिटिश शासन के विरुद्ध भी देश की आजादी के लिए आदिवासी जनजाति वर्ग ने असंख्य प्राणार्पण किये हैं।

लेखक श्री राजकुमार गुप्ता की हर पुस्तक अतीत के अनकहे संदर्भों का प्रस्तुतीकरण करती हैं। 'स्वतंत्रता संग्राम के जनजातीय योद्धा' पुस्तक भी ऐसे ही रहस्यों का उद्घाटन करेगी। मैं पुस्तक की सफलता के लिए शुभकामनाएँ व्यक्त करता हूँ।

13-4-22

(डॉ. नरोत्तम मिश्र)

स्वातंत्र्य समर और जनजातीय योद्धा : आरण्यक संस्कृति का शंखनाद

आत्मीय बंधु भगिनी/गण,

भारतवर्ष इस समय स्वातंत्र्य समर का अमृत महोत्सव संपन्न कर रहा है। स्वतंत्रता के 75 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर पूरा देश इस समय अपने उन पुरखों को स्मरण कर रहा है जिनके अवदान के कारण स्वतंत्रता हमें प्राप्त हुई। यह देश का सौभाग्य रहा कि अमृत महोत्सव के बहाने हमने स्वातंत्र्य समर को अनेक आयामों से देखने का प्रयास किया। उदाहरण के लिए स्वातंत्र्य समर में मातृ शक्ति का योगदान, स्वातंत्र्य समर में वैज्ञानिकों का अवदान, बाल क्रांतिकारियों का योगदान, साहित्यकारों का योगदान, व्यापारियों का योगदान, वणिक बंधुओं का योगदान और इसी तरह देश भर के भिन्न-भिन्न सामाजिक समूहों ने भी अपने-अपने जाति और वर्ग से संबंधित क्रांतिधर्मियों के योगदान के न केवल जीवन वृत्त को खंगाला अपितु आने वाली पीढ़ी के लिए उन दस्तावेजों को प्रकाशित कर एक बड़ा उपकार किया है। वीर विनायक दामोदर सावरकर कहा करते थे-'जिस देश की समकालीन पीढ़ी अपने पूर्वजों के प्राणदान को भुला देती है न तो उनकी स्वतंत्रता सुरक्षित रह पाती है और न वे आने वाली पीढ़ियों को स्वाभिमानी और राष्ट्र भक्त बना सकते हैं।'

साहित्य अकादमी में दायित्व ग्रहण करने के तुरंत पश्चात अनायास मुझे पता लगा जबलपुर के प्रख्यात इतिहासविद आदरणीय श्री राजकुमार जी गुप्ता इन दिनों भोपाल में निवासरत हैं। इतिहास जैसे दुरूह विषयों को उन्होंने अपनी लेखनी से बड़े सहज सरल ढंग से प्रकाशन करके पाठकों तक पहुँचाने का काम विगत वर्षों में किया है। मैं उनके घर का पता खोजकर स्वयं एक दिन उनके निवास पर चाय पीने जा पहुंचा। उसी समय मैंने उनसे आग्रह किया था कि अमृत महोत्सव के निमित्त जनजातीय योद्धाओं के अवदान पर एक पुस्तक तैयार करें। उन्होंने मेरे आग्रह को स्वीकारा और जनजातिय योद्धाओं पर एक ही स्थान पर इतनी सामग्री एक साथ उपलब्ध कराने का महनीय कार्य संपन्न किया है। साहित्य अकादमी इस पुस्तक का प्रकाशन करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रही है। मैं लेखक आदरणीय राजकुमार जी गुप्ता के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ और आप सबके हाथों में सौंप रहा हूँ यह अनूठी पुस्तक। सामाजिक समरसता के लिए प्रयासरत संगठनों और आरण्यक संस्कृति तथा नागरीय संस्कृति के मध्य सेतु स्थापित करने के महत्वपूर्ण कार्य में लगे तथा जनजातीय जीवन से आत्मीय भाव रखने वाले सभी पाठकों के लिए यह पुस्तक संदर्भ पुस्तिका का काम करेगी। पुनः धन्यवाद सहित।

-डॉ. विकास दवे

निदेशक-साहित्य अकादमी, भोपाल

दो शब्द

आदिमानव से प्रारंभ मानवीय अस्तित्व का सामाजिक व्यवस्था में प्रवेश आदिवासी, जनजातीय वर्ग से हुआ था। इनके लिये जनजाति शब्द इसलिए उपयुक्त है क्योंकि ये आदिवासी जनजन की जाति के ही हैं। इसलिए यह कहना उचित होगा कि आज का आधुनिक समाज इन्हीं आदिवासी जनजातीय वर्ग से आया हुआ है। विकास की धारा में जिन्होंने अपनी परंपरायें नहीं छोड़ी वे इस वर्ग के हैं तथा जो परंपराओं से आगे बढ़कर नवीन परंपराओं के साथ अग्रसर हुए वे आधुनिक समाज के सदस्य कहलाए। स्वतंत्रता हर स्तर पर मानव का स्वभाव रहा है। परतंत्रता उसके लिए हमेशा विवशता रही है। अतः आदिवासी जनजातीय वर्ग ने भी कभी परतंत्रता मन से स्वीकार नहीं की। उनके द्वारा हमेशा गुलामी थोपने वालों का प्रतिकार किया गया। सम्पूर्ण इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो जनजातीय वर्ग ने देश की सीमाओं के बाहर से आने वाले आक्रमणकारियों का भी सबसे पहले विरोध किया था। ग्यारहवीं सदी के प्रारंभ में प्रबल आक्रांता महमूद गजनवी का मुकाबला सोलंकी शासकों ने ही किया था। बाद में मोहम्मद गोरी को मार भगाने में सबसे आगे सोलंकी रानी नायिका देवी ही थी। अलाउद्दीन खिलजी का मुकाबला गुजरात के राजा रायकरण बाघेला ने ही किया था। ये सभी जनजातीय समाज के थे। बाद में भी मुगल बादशाह अकबर के द्वारा गोंडवाने पर आक्रमण का सामना गोंड रानी दुर्गावती, रानी तिलकावती ने किया था। तथा अपना बलिदान दिया था। भोपाल की गोंड रानी कमलापती ने भी नवाब दोस्त मोहम्मद का सामना करते हुए प्राणोत्सर्ग किया था। इस तरह जनजातीय वर्ग हमेशा स्वतंत्रता के लिए हुए संघर्षों में आगे रहा है। इसी भावना के तहत मैंने प्रस्तुत पुस्तक में स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाले जनजातीय योद्धाओं के वीरोचित बलिदानों का उल्लेख किया है। आशा है कि विद्वान पाठकों को यह प्रस्तुति रुचिकर प्रतीत होगी।

-राजकुमार गुप्ता रेवाकिंकर
12, समृद्धि परिसर, फेस-1, राजहर्ष कॉलोनी,
नयापुरा, कोलार रोड, भोपाल-462042
मो. 9770453879

अनुक्रमणिका

क्रं.	नाम	पृष्ठ क्रं.
1.	बलिदानी राजा शंकर शाह, रघुनाथ शाह की अमरकथा	11
2.	अमर शहीद वीर नारायण सिंह सोना खान	24
3.	वीर शिरोमणी चकरा विशोई	27
4.	महावीर आदिवासी राघो जी	30
5.	गोंड वीर कुमरा भीमू	32
6.	महाराणा प्रताप के साथी पुंजा भील	34
7.	धरती के देवता-स्वराज्य के उद्घोषक : बिरसा मुंडा	37
8.	स्वतंत्रता सेनानी जात्रा उरांव : विदेशियों को भारत से...	43
9.	पराक्रमी जोरिया भगत एवं क्रांतिकारी रूपा नायक दास	45
10.	क्रांतिकारी पझसी राजा : केरल का विप्लवी फकीर	48
11.	असम के स्वतंत्रता सेनानी क्रांतिवीर-तीरथ सिंह	50
12.	टंट्या मामा-क्रांतिकारी 19वीं सदी ...	53
13.	शिव भक्त क्रांतिकारी शंभुधन फूंगलो	59
14.	वीर आदिवासी कृष्णम् बन्धु	62
15.	वीरवर आदिवासी योद्धा भागो जो नाईक	63
16.	संथाल क्रांतिकारी : तिलका माँझी	66
17.	वीरांगना रानी दुर्गावती-गोंडवाना की स्वतंत्रता सेनानी	69
18.	वीरांगना बलिदानी गोंड रानी तिलकावती भोपाल की वीरांगना रानी कमलापती गोंडवाना के बलिदानी वीर नारायण	71
19.	आदिवासी क्रांतिकारी लक्ष्मण नायक	72
20.	ब्रिटिश काल के मध्यप्रांत एवं बरार...	74
21.	ब्रिटिश खोनोमा युद्ध के बलिदानी नागा क्रांतिकारी	77
22.	क्रांतिवीर खाज्या नायक, भीमानायक...	79
23.	शहीद सुरेन्द्र साय	81
24.	1842 बुंदेला क्रांति के वीर बलिदानी योद्धा	82
25.	स्वतंत्रता सेनानी गंगाधर गोंड एवं अन्य	84
26.	क्रांतिकारी बाला साहेब देश पाण्डे	86

सिदो कान्हू संथालों के राजा

ये क्रांतिकारी संथालों के राजा थे। इन्होंने वर्षों तक अंग्रेजों से युद्ध किया। अनेक युद्धों में अंग्रेजों को हराया। शासन ने उनके सारे क्षेत्र में फौजी कानून लागू कर दिया। साथ ही 14 हजार सेना सारे क्षेत्र में फैला दी गयी। इस तरह विशाल सैन्य बल के कारण सिदो कान्हू एवं उनके साथियों को गिरफ्तार कर जनसमूह के सामने पेड़ों से लटका कर फांसी दे दी गई। संथाल विप्लव में 10 हजार से अधिक आदिवासी शहीद हुए।

मंडला के राजमहल के खंडहर
यहाँ राजा शंकरशाह का जन्म हुआ था

बलिदानी राजा शंकरशाह, कुंअर रघुनाथ शाह की अमर कथा

गोंडवंश के क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी राजा शंकरशाह एवं कुंअर रघुनाथ शाह की अंग्रेजों ने सबसे वीभत्स तरीके से हत्या की थी। अंग्रेजों की उस समय की नृशंसता ने ईस्ट इंडिया कंपनी के मुँह पर सदा के लिए अमिट कालिख पोत दी है। यह कलंक कभी क्षम्य नहीं हो सकता। प्रस्तुत है वीरों के बारे में संघर्ष एवं त्याग की वीरोचित कथाएं जो उन्हें सदा के लिए स्मृतियों में अमर रखती है। इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखीं जाती हैं। मृत्युदंड की सजा तो अंग्रेजों ने हजारों को दी थी। पर राजा शंकर शाह एवं रघुनाथ शाह को मृत्युदंड तोप के द्वारा उड़ाकर दिया गया था। इस तरह उन दोनों के अंगों के छोटे-छोटे टुकड़े उनकी मातृ भूमि में इस तरह से बिखर गये थे मानो उन वीरों ने अपनी धरती माता का निजरक्त से तिलक एवं अंगों रूपी फूलों से श्रृंगार किया हो। इनकी कथा प्रारंभ करने के पूर्व गोंडवंश का इतिहास जान लेते हैं।

गोंड राजवंश के राजाओं का वर्णन :-

इस विषय में आधिकारिक रूप से जनरल स्लीमन, श्री रूपनाथ मैथिल एवं श्री गणेश दत्त पाठक के उल्लेख मिले हैं। डॉ. हीरालाल राय ने अपने आंकलन के अनुसार अपनी अलग सूची प्रस्तुत की है। उपरोक्त तीनों के द्वारा दी गई सूची प्रस्तुत है :-

श्री रूपनाथ मैथिल के अनुसार यादव राय प्रथम गोंड राजा थे। उनका राज्य 158 ईस्वी में प्रारंभ हुआ। जनरल स्लीमन के अनुसार यादव राय का राज्य 382 ई. में प्रारंभ हुआ। श्री गणेश दत्त पाठक का मानना है कि उनका राज्य 415 विक्रम संवत तद्नुसार लगभग 358 ई. में प्रारंभ हुआ था। यादव राय के बाद माधव सिंह, जगन्नाथ, रघुनाथ, रूद्रसिंह, बिहारी सिंह, नरसिंह देव, सूर्य भानु, वासुदेव, गोपाल साहि, भूपाल साहि, (भूपाल साहि का राज्य 476 ई. में बताया गया है तथा दावा है कि भोपाल उन्होंने बसाया था) गोपीनाथ, रामचन्द्र, सुरतान सिंह, हरिहर देव, कृष्ण देव, जगत सिंह, महासिंह, दुर्जनमल्ल, यशः कर्ण, प्रतापदित्य, यशश्चंद्र, मनोहर सिंह, गोविन्द सिंह, रामचंद्र, कर्ण, रत्नसेन, कमल नयन, नरहरि देव, वीर सिंह, त्रिभुवन राय, पृथ्वी राय, भारतीचंद्र, इनके बाद की सूची ऐतिहासिक मानी गई है। मदन सिंह, (34) उग्रसेन (35) रामसाहि (36) ताराचंद्र (37) उदय सिंह (38) भानुमित्र (39) भवानी दास (40) शिव सिंह (41) हरि नारायण सिंह (42) सबल सिंह (43) राय सिंह (44) दादीराय (45) गोरखदास (46) अर्जुन सिंह (47) संग्राम साहि (48) दलपति शाह (49) वीर नारायण, दुर्गावती (50) चंद्रशाह (51) मधुकर शाह (52) प्रेमनारायण (53) हिरदय शाह (54) छत्र शाह (55) केसरी शाह (56) नरेन्द्र शाह (57) महाराज शाह (58) शिवराज शाह (59) दुर्जन शाह (60) निजाम शाह (61) नरहर शाह (62) और सुमेर शाह (63) इसके बाद गोंड राज्य समाप्त हो गया तथा मराठा राज्य प्रारंभ हुआ। क्रांतिकारी राजा शंकर शाह को पुरवा गांव भरण पोषण के लिए दिया गया था। रघुनाथ शाह उनके पुत्र थे। परंतु डॉ. हीरालाल राय के अनुसार क्रमांक (34) में वर्णित मदन शाह से क्रमांक 63 तक की गोंड राजाओं की वंशावली का गढ़ा केन्द्रित राज्य था। यद्यपि राजधानियां बदलतीं रहीं पर गढ़ा जूनी राजधानी कहलाता रहा।

गोंड राज्य की समाप्ति के समय का घटना चक्र :-

डॉ. हीरालाल राय के अनुसार गोंड राज्य की शुरुआत गढ़ा से राजा मदन शाह (सिंह) के समय 13वीं शतब्दि के अंतिम पक्ष में हुई थी। उस समय केवल चार किले थे। गढ़ा, अमोदा, कनौजा एवं बरगी। इस तरह गोंड राज्य की सीमाएँ वर्तमान जबलपुर जिले के अंदर ही थीं। मदन शाह से संग्राम शाह तक 15 राजाओं ने गढ़ा राजधानी कायम रखी पर दलपत शाह ने गढ़ा के अलावा संग्रामपुर, मंडला को भी केन्द्र बिन्दु बनाया। उसके बाद अंत तक गढ़ा जूनी राजधानी तो रही पर मंडला, राम नगर भी राजधानी के रूप में स्थापित हुई। चौरागढ़ (करेली) आर्थिक कोष का केन्द्र रहा। सबसे अधिक प्रगति महाराज संग्राम शाह के समय हुई। उस समय रायसेन, भोपाल के साथ पश्चिम की ओर बीना तक गोंड राज्य था। छत्तीसगढ़ के अनेक किले गोंड राज्य में थे। लेकिन अंत में राजा निजाम शाह के समय (1749-1776) तक मात्र 22 किले शेष रहे। जो सन् 1779 में मराठा राजा के अधीन चले गये। अंतिम राजा नरहर शाह, सुमेर शाह, फिर नरहर शाह रहे। किसी का कथन 1779 तो किसी का 1789 बताया जाता है जब गोंड राज्य की समाप्ति हुई। निजाम शाह के दत्तक पुत्र सुमेर शाह थे। उनके चचेरे भाई नरहर शाह को खेर राजा रघुनाथ राव ने खुरई के किले में बंद कर दिया था। राजा सुमेर शाह भूमिगत होकर पेशवा की सेना से गुरिल्ला युद्ध करने लगे थे। उस समय यद्यपि गोंड राज्य पर पेशवा की सेना का अधिकार हो गया था। परंतु मराठा राजाओं, होल्कर, सिंधिया एवं भोंसले के अंदरूनी संघर्ष में पेशवाई शक्ति क्षीण पड़ रही थी। अंत में पेशवा ने गढ़ा मंडला का गोंड क्षेत्र नागपुर के भोंसले को दे दिया। क्योंकि इसके काफी इलाके पर भोंसले ने पहले ही अधिकार कर लिया था। पेशवा द्वारा भोंसले को यह क्षेत्र दे दिये जाने के बाद भी सिंधिया, होल्कर की आँखें इस क्षेत्र पर लगीं हुई थी। उधर ईस्ट इंडिया कंपनी भी इनके आपसी संघर्ष में अपना दांव लगाने का अवसर खोज रही थी। इस दौरान सुमेर शाह ने सभी गोंड जागीरदारों मालगुजारों को एकत्रित कर भोंसले का शासन समाप्त करने की योजना बनाई। इसके लिए सुमेर शाह ने सागर देवरी के पास पंज महाल में गोंड सरदारों की संयुक्त सेना एकत्रित की। योजना

थी कि टडा केसली के गोंड सरदार निरपत सिंह की सेना के आते ही संयुक्त सैन्य दल सागर के लिए प्रस्थान करेगा जहाँ पेशवा के प्रतिनिधि राजा रघुनाथ राव आबा साहिब का सदरमुकाम था। पर टडा केसली के सरदार निरपत सिंह की सेना के आने में एक सप्ताह का बिलंब हो गया। इसी बीच समीप ही सिंधिया की विशाल छावनी से सैन्य दल ने सागर की सेना के साथ मिलकर देवरी में गोंड सेना पर हमला कर दिया। भयानक संघर्ष हुआ। उसमें गोंड सेना की पराजय हुई तथा सुमेर शाह मारे गये। वह सन् 1802 का समय था।

बालक शंकर शाह का जीवन अभाव एवं कष्टों से शुरू :-

दिवंगत सुमेर शाह की विधवा रानी अपने पुत्र शंकर शाह एवं पुत्री के साथ जूनी राजधानी गढ़ा के पुरवा ग्राम में रहने लगीं। उन्हें रहने के लिए एक मकान दे दिया गया था। जिसे हवेली कहते थे। वह स्थान पुरवा में आज भी है जो मालगुजार की हवेली कहलाता है। पुरवा ग्राम में उन्हें खेत भी मिल गये। उन्हें मराठा सरकार ने मासिक वृत्ति भी देना शुरू कर दिया था। इस तरह रानी हवेली में पूर्वजों के हथियार, राज मुकुट एवं जेवर आदि संजोए जीवन व्यतीत करने लगी। बालक शंकर शाह को वे शंकर राजा कहकर पुकारतीं थीं। अत: गाँव भर में आबाल वृद्ध उन्हें शंकर राजा कहने लगे। बालक शंकर राजा सुबह उठकर नित्य नैमित्य कर्मो से निवृत्त होकर वर्जिश किया करते थे। फिर गायों को चारा पानी देकर दूध दुहते थे। इसके बाद अल्पाहार एवं दुग्धपान करके खेत चले जाते थे। वहाँ दोपहर तक खेती का काम करने के बाद भोजन किया करते थे। फिर बालकों की संसद जुड़ जाती थी।

शंकर राजा उनके साथ तीरकमान, तरकश तथा बर्छे आदि बनाया करते थे। वे आपस में कबड्डी, धनुर्विद्या, तैराकी आदि का अभ्यास किया करते थे। इसी बीच उनकी छोटी बहिन बीमार पड़ गई। सामर्थ्य के अनुसार उसका इलाज किया गया। गाँव वालों ने उनकी मदद भी की परंतु उसे बचाया न जा सका। दुखी मन से दिवंगत बच्ची का अंतिम संस्कार किया गया। शंकर राजा की माता जीत कुंवरि पति की मृत्यु के बाद पुत्री के बिछोह से व्यथित होकर अधिक दिन न जी सकीं। उन्होंने भी संसार त्याग दिया। अब किशोर शंकर राजा अकेले रह गये। फिर भी उन्होंने धैर्य नहीं त्यागा अपना खोया

राज्य वापस लेने तथा पिता की मृत्यु का बदला लेने का संकल्प और तीव्र हो गया। वे अधिक सक्रियता से अपने कार्यों में जुट गये। माला देवी (कमलासनी लक्ष्मी) उनकी आराध्या थीं। नित्य प्रति वे उनकी पूजा में पत्र पुष्प अर्पित करने के बाद यह श्लोक लिखकर उनके चरणों में रख देते थे-

मूद मुख डंडिन को जुगलों को चबाई खाई
खूंद दौड़ दुष्टन को शत्रु संहारिका
मार अंग्रेज रेजकर देई मात चण्डी
मचे न हि बैरि बाल बच्चे संहारिका
संकट की इच्छाकर दास प्रतिपाल कर
दीन की सुन आय मात कालिका
खायइ लेत मलेच्छन को झेल नहिं करो अब
भच्छन कर तच्छन घौर मात कालिका।

शंकर राजा बड़े हो गये थे। उनके परिजनों तथा पुरानें गोंड जमीदारों ने परंपरा के अनुसार उनका राज तिलक किया तथा उन्हें राजा शंकर साहि का खिताब दिया। अब राजा ने गुरिल्ला दल का गठन किया। वह दल उस समय के सत्ताधीशों के काफिलों पर हमले करने लगा। गोरिल्ला दल का नाम गोंटिया दल रखा गया। उन दिनों हाथीताल एवं गंगा सागर की सीमायें मिली हुई थी। वर्तमान एलआईसी से होकर देवताल के रास्ते भेड़ाघाट, तिलवारा घाट का मार्ग नहीं था। एलआईसी की जगह गोंड कालीन हाथी शाला थी। वहाँ किसी समय में रानी दुर्गावती के सफेद हाथी रहा करते थे। तालाब उनके विहार के लिए उपयोगी था। तिलवारा एवं भेड़ाघाट जाने के लिए जबलपुर से गढ़ा होकर ही जाना पड़ता था। गढ़ा तो गोंडों का गढ़ था। अत: शासक वर्ग के लिए बड़ा सिरदर्द बन गया था। गोंटिया दल के गोंडवीरों ने अनेक बार सफल हमले कर बड़ी संख्या में अस्त्र-शस्त्र तथा धन एकत्रित कर लिया था। अब राजा शंकर शाह 20 वर्ष के हो गये थे। अत: उनका विवाह गोंडवाने के जमींदार लोटन सिंह जगेत की पुत्री राजकुमारी फूलकुंवर के साथ कर दिया गया। विवाह समारोह में भारी संख्या में गोंड सरदारों ने भाग लिया। सभी ने उस भव्य समारोह में अपना योगदान दिया। लोधी सरदारों ने भी समारोह में भाग लिया।

गोंडों के भेद तथा उनके ऐतिहासिक साक्ष्य :-

गोंड अपने को कोईतूर कहते हैं। इसका अर्थ क्षत्रिय योद्धा होता है। इस्लामिक समय में उन्हें गोंड कहा गया। वही नाम चल पड़ा। नाग शब्द पर्वतों, सर्प तथा हाथी के लिये कहा जाता है। पर्वतों पर रहने वाले नागवंशी कहे जाते हैं। नर्मदा एवं गोदावरी अंचलों तथा सतपुड़ा एवं विन्धा पर्वत मालाओं के वासियों को नागवंशी कहा जाता है। बस्तर के अंतर्गत माडिया इलाके में अनेक शिला लेख तथा अस्सी स्वर्ण मुद्रायें पाई गई है। जो नागवंशी राजघराने की है। कवर्धा के राजा नागवंशी हैं। नाग नदी के किनारे महानगर नागपुर बसा है। यद्यपि नाग नदी अब नाला मात्र रह गई है। बस्तर की जनजाति गोंड प्रजाति की ही कही जाती है। दक्षिण भारत में भी अनेक जमींदार गोंड जाति के पाये जाते हैं।

गढ़ा मंडला के गोंड राजाओं के सबसे प्रतापी सम्राट संग्राम सिंह या साहि हुए है। उन्होंने अपने नाम की स्वर्ण मुद्राएं चलाई थी। उन पर 'पुलस्त्य वंश संग्राम साहि' प्रदर्शित है। उनकी रजत मुद्रायें भी पाई गई है। ये लंदन एवं कलकत्ता संग्रहालयों में रखी है। महर्षि पुलस्त्य श्रेष्ठ ब्राह्मण थे। उनके पुत्र ऋषि विश्रवा के दो विवाह हुए थे। पहला ऋषि कन्या से हुआ जिनकी संतान देव धनपति एवं हिमालय की नगरी अलका पुरी के अधिपति कुबेर थे। दूसरा विवाह दानव कन्या कैकसी से हुआ था। जिनके रावण, कुंभकर्ण एवं विभीषण पुत्र हुए। ये सभी ब्राह्मण कहे जाते हैं। यही कारण रहा है कि सम्राट संग्राम साहि ने अपने आप को पुलस्त्यवंश कहते हुए गोंड जाति को ब्राह्मण श्रेणी में बताया था। यह तो स्वार्थी तत्वों की कुचेष्टा ही कही जा सकती है कि इतने श्रेष्ठ वर्ग को असभ्य जंगली एवं वनवासी प्रजाति का बता दिया। गोंड कोईतूर वास्तव में ब्राह्मण जाति के क्षत्रिय वृत्ति के योद्धा कहे जाने चाहिए। यह ईसाई मिशनरियों का धर्म परिवर्तन का षड़यंत्र भी कहा जा सकता है कि इन्हें हीन बताकर श्रेष्ठता का लालच तथा अन्य प्रलोभन देकर अपने धर्म में शामिल कर लिया जाए। संग्राम साहि ने रस रत्नमाला नामक ग्रंथ भी लिखा था। जिसमें स्वयं को ब्रह्मा की संतान बताया था। यह ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखा गया था। इसमें 233 श्लोक थे। यह राजनीति के विषय में लिखा

गया था। इसे राजनीति का लघु विश्व कोष भी कहा जा सकता है। इसमें वर्णित वंश परंपरा यद्यपि कल्पनामय है परंतु ज्ञानवर्धक तो है ही। वह ब्रह्म, मनु, ध्रुव, वेणु (सुनीता पुत्र) निषाद एकलव्य, खरंग (सूर्यभल्ला) दल सिंह, श्री हंस एवं संग्राम साहि को प्रदर्शित करती है। ग्रंथ में उनकी रानी का नाम सुमति देवी लिखा है। उनका नाम सुलक्षणा भी कहा जाता है जो सिंगोरगढ़ के सुलक्खा महल से मिलता है। इस ग्रंथ के कुछ अंश मंडला के गोलवलकर परिवार में देखे गये थे। इस पुस्तक के बारे में विस्तृत लेख दिनांक 6/10/1952 को लिखा गया जो कलकत्ता के संग्रहालय में है।

असम की कार्बी जनजाति अपने आपको बाली एवं सुग्रीव का वंशज मानती है। उनकी भाषा में रामकथा 'साबिन आलुम' के नाम से प्रचलित है। वहीं की तिवालालुंग जाति, मातृसत्ताक है तथा स्वयं को देवी सीता की संतान मानती है। मिजो जाति में भी राम लक्ष्मण हनुमान के कथानक प्रचलित है। अरुणाचल की मिश्मी जाति स्वयं को महाभारत के रुक्मि की संतान बताती है यहां रुक्मि नगर नामक एक गांव है। असम की बोडो एवं डिमासा जनजाति स्वयं को हिडिम्बा एवं भीम की संतान घटोत्कच का वंशज मानती है। उनके राजवंश का नाम हेडम्बा बर्मन है। प्रत्येक राजा के नाम के पीछे नारायण नाम जुड़ता है। घटोत्कच नारायण से प्रारंभ अंतिम राजा गोविन्द नारायण की 182 राजाओं की सूची राजमाला में है। इस तरह देश की सभी जनजातियाँ महाभारत या रामायण काल से संलग्न है।

मराठा शासकों ने गोल्डन काटन रोड बनाई :-

नागपुर क्षेत्र से कपास के उत्तर भारत परिवहन के लिए सड़क बनाई गई थी। उसके लिये तिलवारा घाट पर नौका पुल बनाया गया था। सुरक्षा के लिए उत्तर तट पर गढ़ी थी जहाँ भोंसले का सेना नायक रहता था जो नौका पुल की देखरेख तथा कर वसूली करता था। इस सड़क का संबंध गढ़ा की बस्ती से होकर था। तिलवारा घाट पर जब गढ़ी नहीं थी तब भोंसले शासन की कपास से भरी नावों पर हमला करके गोंटिया दल ने आग लगा दी थी। इस तरह कई वारदातों के बाद वहां पर गढ़ी बनाई गई थी। परंतु उसके बाद गढ़ा बस्ती से गुजरने पर गोंटिया दल के हमले होने लगे थे। इससे बचने

के लिए हाथीताल के कुछ भाग तथा सूपाताल के मदन महल पहाड़ी के किनारे से सड़क निकाली गई। पहले सूपाताल का नाम शूर्पारक सर था। सड़क निकलने के बाद वह सूपा की तरह हो गया था। इसलिए उसे सूपाताल कहने लगे थे। भोंसले शासन के पहले ही रघुनाथ राव आबा साहिब ने नया नगर बसा दिया था तथा उसका उद्घाटन मराठा बार भाई परिषद के प्रमुख सदस्य महादजी सिंधिया द्वारा किया जा चुका था। बाद में यह क्षेत्र भोंसले के अधिकार में आया था। सड़क बनने के बाद नागपुर की ओर से उत्तर भारत की दिशा में जाने वाला माल इसी सड़क से होकर जाने लगा था। तत्पश्चात पेशवा के प्रतिनिधि खेर राजा रघुनाथ राव आबा साहिब भी चल बसे। अब राजा शंकर शाह ने स्वतंत्रता की आशा से गोंटिया दल का संघर्ष तेज कर दिया। हर तरफ हमले होने लगे। छापामार युद्ध जोरों पर चलने लगा। विवाह के दो वर्ष उपरांत राजा शंकर शाह एवं रानी फूल कुंवरि को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। उसका नाम रघुनाथ रखा गया। बाद में वे कुंवरि रघुनाथ शाह के नाम से पुकारे गये। राज्य प्राप्ति के लिए राजा शंकर शाह ने दुर्दांत पिंडारी अमीर खान से भेंट की। उस समय अमीर खान 25 हजार घुड़सवार पिंडारियों की सेना का स्वामी था। उससे मुकाबला करने की हिम्मत छोटे मोटे रजवाड़े नहीं करते थे। अमीर खान ने सहायता का वचन दिया तथा शीघ्र ही गढ़ा जबलपुर आने की सहमति दी। 12 अक्टूबर 1809 को पिंडारी सरदार अमीर खान ने जबलपुर पर 12 हजार घुड़ सवारों तथा 7 तोपों के साथ हमला कर दिया। उसी समय दूसरा पिंडारी सरदार शाहमत खां दो हजार घुड़सवारों एवं 7 तोपों के साथ तिलवारा घाट के दक्षिण तट पर जबलपुर पर हमले के लिए तैयार था। पर वह अमीर खां के सामने हिम्मत नहीं जुटा पाया। उस दिन जबलपुर के निवासियों ने जो त्रासदी झेली वह अकल्पनीय रही। सैकड़ों महिलाएं बलात्कार के बाद निर्मम हत्या की शिकार हुईं। पिंडारी साधारण हत्यायें नहीं करते थे। वे भयानक ताड़ना देकर मारते थे। एक आदमी के सीने पर बड़ा पटिया रखकर उस पर दो, दो चार-चार पिंडारी मचक-मचक कर उसकी पसलियाँ चकनाचूर कर देते थे। व्यक्ति के मुँह पर मिर्च पावडर का थैला बाँधकर उसे घंटों उसी तरह सांस लेने के लिए छोड़ दिया जाता था। उबलते पानी में नमक डालकर

घावों पर डाला जाता था। महिलाओं के स्तन काट दिये जाते थे। इस तरह धन, इज्जत, अस्मत लूटकर वे अपनी रक्त पिपासा बुझाते थे। उस दिन भयानक नरसंहार कर तथा कई ऊँटों में सोना, चाँदी, नकदी लादकर पिंडारी सरदार जबलपुर को बिलखता छोड़कर कटंगी की ओर चला गया।

अमीर खां के विध्वंस के दृश्यों से राजा का मन विचलित हो गया। वे पीड़ितजनों की सेवा में लग गये। गोंटिया दल के सदस्यों ने राहत शिविर लगाये। मृतकों के अंतिम संस्कार किये। लुटे पिटे परिवारों को अनाज उपलब्ध कराया। इस तरह सेवा करने के उपरांत वे फिर अपने स्वतंत्रता के लक्ष्य में जुट गये। अब तक उन्होंने 8 बंदूकें एवं कारतूस तथा तलवारें आदि सैनिकों से लूट लीं थी। अबकी बार गोंटिया दल ने नागपुर से जबलपुर भेजे जाने वाले शस्त्रों के मराठा काफिले पर हमला किया। उन्होंने घनघोर युद्ध के बाद 47 बंदूकों एवं 23 पेटियां कारतूस लूट लीं। अब उनके पास काफी असलहा हो गया था। इसके लिए उन्होंने बघशेरा तालाब के किनारे मंदिर के पास एक तहखाने में अपने शस्त्रों तथा राशि का भूमिगत कोषागार बनाया। जिसमें सारा सामान रखकर उसे आगामी हमलों के लिए सुरक्षित कर लिया।

भोंसले का शासन समाप्त, ईस्ट इंडिया कंपनी का अधिकार :-

उधर ईस्ट इंडिया कंपनी तेजी से भारत पर अपना कब्जा करती जा रही थी। उस समय मुगल सत्ता नाम मात्र की रह गई थी। पेशवा की ताकत भी अहमदशाह अब्दाली से पराजय के बाद क्षीण हो चुकी थी। भोंसले शासन भी कमजोर हो गया था। अतः ईस्ट इंडिया कंपनी ने नागपुर एवं जबलपुर पर पूरी तरह से अपना अधिकार जमाने की दिशा में जबलपुर की ओर हमला करने के लिए कूच किया। बिग्रेडियर जनरल हार्डीमेन ने इलाहाबाद की ओर से कदम बढ़ा दिये थे। उन्हें रोकने के लिए मराठा सेना सतर्क अवश्य थी पर गवर्नर रामजी टांटिया घबरा रहा था। 20 दिसम्बर 1817 की सुबह अंगरेज सेना जबलपुर आ पहुँची। पहला मुकाबला कटनी मार्ग की ओर खाईपुरा में हुआ। मराठा सेना हारकर भागी तथा किलापनाह में प्रवेश कर गई। उन दिनों वर्तमान लाईगंज में मराठों का किला था। चारों ओर किला पनाह की दीवार थी। उसके चारों ओर शहर पनाह की दीवार थी। किलापनाह की दीवार में

प्रवेश द्वार थे। उनमें से कमानिया गेट, कबूतर खाना गेट तथा गढ़ाफाटक गेट आज भी है। अंधेर देव तथा गंजीपुरा के गेट समाप्त हो गये हैं। 20 दिसम्बर 1817 की दोपहर कबूतर खाना गेट को तोड़कर सबसे पहले मेजर ओब्रायन ने जबलपुर की किलापनाह में प्रवेश किया। बाद में एक घंटे के अंदर तोपों की मार से किला ध्वस्त कर दिया गया। बाकी द्वार भी खोल दिये गये। मराठा सूबा रामजी टांटिया पलायन कर गये। जबलपुर पर पूरा अधिकार ईस्ट इंडिया कंपनी का हो गया। राजा शंकर शाह ने 22 दिसम्बर 1817 को हार्डीमेन से मुलाकात कर गढ़ा मंडला पर गोंड राजा का दावा पेश किया पर हार्डीमेन ने उनकी मांग ठुकरा दी। अब राजा के मन में अंगरेजी शासन से मुक्ति पाने की योजना बनने लगी। पिंडारियों की क्रूरता तथा वादा खिलाफी से उन्हें सबक मिल गया था। अत: अब वे कटंगी के सूबेदार बेनी सिंह, जिन्होंने अमीर खां को धूल चटा दी थी की राह पर अपने को सुगठित करने की दिशा में चल पड़े।

जबलपुर में ईस्ट इंडिया कंपनी ने पहली प्रशासन कमेटी में ले. कर्नल निकोल की अध्यक्ष मेजर मेनले, के. डिस्पार्ड, ले. हार्वे को सदस्य नियुक्त किया साथ ही रघुनाथ राव इंगले को सूबेदार बनाया। 25 दिसम्बर 1817 का प्रथम क्रिसमस पर्व हार्डीमेन ने यहीं पर मनाया। उसका अंतिम प्रमुख पर्व एवं समापन 1 जनवरी 1818 को था। उस दिन भव्य आयोजन किया गया। वर्तमान क्राइस्ट चर्च शाला जहाँ पहले विशाल मैदान था, वहाँ पर मंच सजाया गया। उसमें नववर्ष के आयोजन की अध्यक्षता करने ले. कर्नल निकोल मंच पर आसीन हुए। राजा शंकरशाह ने इस आयोजन को निशाना बनाया तथा 24 गोंड युवक युवतियों के दल को नृत्य संगीत के लिए भेजा। सारा समुदाय जब नृत्य की मधुरिमा का आनंद उठा रहा था तभी उन गोंड, आदिवासी युवक युवतियों ने रक्षकों की बंदूके छीन कर मंच पर छलांग लगा दी। एक युवक कर्नल की गर्दन पर सवार हो गया। उसने कर्नल की गर्दन पर छुरे से प्रहार किया। पर उसी समय दुर्योंग से कर्नल की कुर्सी गिर गई, युवक की छुरी से कर्नल घायल तो हुआ पर गिरते ही छुरी युवक के पेट में भी घुस गई। युवक का प्राणान्त हो गया पर शेष गोंड एवं अन्य आदिवासी युवक युवतियों ने 20 अंगरेज सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। मंचासीन अतिथि भी

घायल हुए तथा जान बचाकर भाग निकले। बाद में शेष सैनिकों ने गोंड युवक युवतियों को गोलियों से भून डाला। इस तरह अंगरेजी राज में जबलपुर में आदिवासी वर्ग का पहला बलिदान हुआ। 1 जनवरी 1818 की विप्लव की कहानी अंगरेज कैसे प्रसारित होने देते? यह उनके लिए घोर अपमान जनक जो था। यद्यपि उसके बाद सत्ता विस्तार के नाम पर हजारों गोंड सहित अन्य आदिवासियों का नरसंहार ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना ने कर दिया था। पर गोंटिया दल के मुखिया राजा शंकर शाह का पता नहीं चला तथा उनके मुख्यालय की जानकारी भी नहीं मिली।

गोंटिया दल की गुप्त बैठक, नवीन गुरिल्ला अभियान की रूपरेखा :-

शीघ्र ही गोंटिया दल के शेष नेताओं की गुप्त बैठक हुई जिसमें निश्चय किया गया कि फिलहाल कंपनी का विरोध न किया जाए। साथ ही राजा के लिए राजकीय वृत्ति एवं जागीर की मांग की जाए एवं राजा तीर्थ यात्रा के लिए जाएं। 1 फरवरी 1818 में मेजर ओब्रायन प्रशासनिक परिषद के प्रमुख बने। उनके सामने अपील पेश होने पर उन्होंने तीन गांव की जागीर राजा शंकर शाह को प्रदान की। राजा परिवार सहित पुरवा की हवेली में ही रहने लगे। साथ ही वे बघ शेरा तालाब के समीप शिव मंदिर के नीचे बने तहखाने में रखे शस्त्रों का भी निरीक्षण पूजन भजन के नाम पर करते रहते थे। मंदिर के एक आले में स्थित सूर्य देव की प्रतिमा के पीछे से तहखाने का मार्ग हुआ करता था। इस समय तक कुंअर रघुनाथ भी युवा हो रहे थे। उनका विवाह भी धूमधाम से किया गया। सारी बिरादरी एवं गांव के लोग एकत्रित होकर आमोद प्रमोद में लीन रहे। पर राजा अपने विश्वस्त सहयोगियों के साथ तहखाने में मंत्रणा में लगे रहे। उस अवसर पर भर्रई के राव साहब ने 10 तमंचे तथा गोलियों राजा को भेंट की। साथ ही भर्रई, कटरा, पाटन, गढ़ाकोटा, सिंगौरगढ़, मंडला, बिछिया केसली आदि से आये सरदारों ने नये गुरिल्ला युद्ध के लिये अपने-अपने क्षेत्रों से पांच-पांच युवाओं को भेजने का वचन दिया। इस तरह नये गुरिल्ला युद्ध की योजना बन गई।

शीघ्र ही बहराम डाकू दल का आतंक प्रारंभ हो गया। यह दल वास्तव में गोंड आदिवासी वर्ग का ही था जो अमीरों, अंगरेज परस्तों एवं सत्ताधीशों

के काफिलों पर हमला करके उन्हें लूटता था। यह दल सन् 1857 तक कार्यरत रहा। सन् 1842 की बुंदेला क्रांति में भी इस दल ने सहयोग दिया था। इनका ठिकाना वर्तमान गढ़ा के पास चौहानी के घोर जंगल में हुआ करता था। राजा इनके लिए चुपचाप भोजन भिजवाया करते थे। एक समय तो ऐसा आया कि उन जाबांजों के लिए भोजन भेजने के कारण राजा के परिवार को मठा रोटी पर गुजारा करना पड़ा था। राजा ने सब सहा पर संघर्ष के पथ को नहीं छोड़ा।

देश में अंगरेजों के अत्याचारों के खिलाफ क्रांति की आग सुलग रही थी। राजा को समाचार मिल रहे थे। अत: वे संपर्क के लिए फिर तीर्थ यात्रा के लिए चल पड़े। उनके साथ एक हजार भगवा तीर्थ यात्रियों के वेश में उनके सहायक भी थे। उनमें से कई एकतारा तंबूरा भी लिए थे। गाते बजाते यह दल कानपूर, झांसी, मथुरा वृंदावन, बनारस की यात्रा करता रहा। उन्होंने गुप्त रूप से नाना साहब, तात्या टोपे, मौलवी अहमद शाह एवं रानी लक्ष्मीबाई से भी भेंट की तथा आगामी क्रांति की जानकारी भी प्राप्त की। भेंट स्वरूप तंबूरे भी बदले गये। प्राप्त तंबूरों में बंदूकें तथा गोलियाँ भरीं थी। बारूद बनाने की विधि भी सीखी। ढोलकों में तमंचे एवं कारतूस भरे थे। लौटने पर सारा सामान तहखाने में पहुँचा दिया गया। शीघ्र ही 1857 की क्रांति की शुरुआत हो गई। रोटी और कमल के संदेशों का आदान प्रदान होने लगा। राजा के पास भी संदेश आया। इसके लिये गाड़ाघाट (पाटन) के वन में बैठक हुई। कुंअर रघुनाथ ने उसमें भाग लिया। गाड़ा घाट के जमींदार ठाकुर जवाहर सिंह दुबे ठाकुर गजराज सिंह दुबे सहित महासिंह कोल तथा अन्यों ने भाग लिया। विप्लव की तिथि पर विचार हुआ। जबलपुर में भी 52वीं पलटन क्रांति के पथ में थी पर तोपखाना से संपर्क नहीं हो पाया। योजना थी कि तोप खाना शामिल हो तो धड़ाधड़ गोलाबारी कर अंगरेजों के ठिकानों को ध्वस्त कर दिया जाए। गोंड जाबांजों का 500 का दल चौहानी में गुप्त रूप से तैयार था। सन् 1857 के मुहर्रम के पर्व के पहले दिन जांबाजों को अस्त्र शस्त्र दिये जाने थे। सबके लिए भोजनादि की व्यवस्था राजा ने कर दी थी। उसके लिए राजमुकुट तथा जेवर आदि बेचकर राशि एकत्रित की गई थी। जांबाज लमानों के वेष में चौहानी में एकत्रित थे। तोपखाने के तोपचियों से चर्चा चल रही थी।

ले. क्लार्क उस समय जबलपुर का डिप्टी कमिश्नर था। उसे संदेह

हो गया। राजा के यहाँ पेंशन लेकर एक कारकुन जाता था। उसने साहब को गुप्त गतिविधियों की सूचना दी। डि. कमिश्नर चौकन्ना हो गया। उसने एक चपरासी को फकीर के वेश में भेजा। उसकी झोली में रोटी व कमल रख दिये जो उस समय जगह-जगह बांटे जा रहे थे। फकीर वेषधारी गुप्तचर हवेली पहुँचा। फकीर ने रोटी और कमल राजा को दिखाकर उनका विश्वास जीता तथा स्वयं को क्रांति सेना के दिल्ली के सेनापति बख्त खां का संदेश वाहक बताकर यहाँ का हाल पूछा। भोले भाले राजा ने भरोसे में आकर सारी योजना बता दी। फिर क्या था, गुप्तचर तत्काल क्लार्क के पास पहुँचा एवं उसे सारा हाल कह सुनाया। क्लार्क ने तत्काल सेना की एक गारद चौहानी भेजी तथा स्वयं 40 अश्वारोही सैनिकों के साथ राजा की पुरवा स्थित हवेली पहुँचा। वहाँ से और कुछ तो नहीं मिला परंतु एक थैली में माँ कालिका से की जाने वाली प्रार्थना की एक पर्ची मिल गई। बस उसी को आधार बनाकर उसने राजा शंकर शाह एवं कुंवरि रघुनाथ शाह को बंदी बना लिया। राजा की पत्नी फूल कुंवर तथा बहू हीर कुंवरि पिछली दीवार फांदकर भागने में सफल हो गई। उधर चौहानी में सैनिकों ने गोलीबारी करके लमाना वेशधारी गोंडों की हत्याकर दी। इस तरह जबलपुर की क्रांति का शुरुआत के पहले ही पटाक्षेप हो गया।

फिर कानूनी औपचारिकता शुरू हुई। मुकदमें का नाटक रचा गया। 14 सितंबर 1857 को 12 पेज के उर्दू में लिखे कचहरी अदालत फौजदारी जबलपुर, मुकदमा-ए-बगावत फैसले में अंत में लिखा गया कि जुर्म साबित होने पर शंकर शाह व रघुनाथ शाह को सजाए मौत दी जाती है। तोप से जिन्दा उड़ा दिया जाए। फिर न अपील न कुछ 18 सितम्बर को जबलपुर जेल के सामने दोनों को तोपों के मुँह से बाँधकर तोपें चला दी गई। दोनों वीरों की देहों के पावन अवशेष एवं रक्त सामने धरती पर कण कण में फैल गये। बाद में गोंडों ने रोते हुए उनके अवशेष सहेजे तथा राजकीय पालकी में एकत्रित कर उनका वीरोचित अंतिम संस्कार किया। इस तरह दो महान देशभक्त क्रांतिकारियों की स्वतंत्रता संघर्ष जीवन यात्रा समाप्त हुई। बाद में रानी फूल कुंवरि तथा युवरानी ही कुंवरि अंगरेजों से युद्ध करने गाड़ाघाट चली गईं। जहाँ वहाँ के वीरों के साथ उन्होंने भी प्राणार्पण किये।

अध्याय-2

अमर शहीद वीर नारायण सिंह सोना खान

पूर्व मध्य प्रांत स्वतंत्रता के पश्चात मध्यप्रदेश तथा वर्तमान के छत्तीसगढ़ प्रदेश के रायपुर जिले की बलौदा बाजार तहसील के अंतर्गत 1857 के पहले सोना खान रियासत के जमींदार रामराय थे। वे आदिवासी जनजाति के थे। उनके पूर्वजों के पास महाराज संग्रामशाह के समय से जमींदारी चलीं आ रही थी जो भोंसले शाही एवं ईस्ट इंडिया कंपनी के समय भी कायम रही। रामराय आजादी के सिपाही थे। उन्होंने अंग्रेज सत्ता को कभी अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। उनके पुत्र वीर नारायण सिंह भी उन्हीं के नक्शे कदम पर चलते थे। लगभग सन 1856 के समय में रायपुर में अकाल पड़ा था। धनिकों अंग्रेजों तथा स्वयं सरकारी गोदामों में अनाज भरा पड़ा था। पर आम आदमी भूख से तड़प कर मर रहा था। जानवरों की लाशों से खेत व गलियाँ पटी पड़ी थी। धान का कटोरा कहे जाने वाला छत्तीसगढ़ धूल का कटोरा बन गया था। वहाँ लहलहाती हरियाली की जगह सूखे ढूंठ एवं धूल उड़ाते खेत दिखाई दे रहे थे। वीर नारायण जी ने अपने पास रखा अनाज गरीबों में बाँटना शुरू कर दिय। कुछ दिन लोगों को भुखमरी से राहत मिली। पर कब तक? आखिर जमींदार का भंडार भी खाली हो गया। उनका परिवार भी कठिनाई से शकरकंद, आलू आदि खोदकर पेट भरने लगा। पर वह भी समाप्त होने को आ गया। अब वीर नारायण ने अपने वनवासी साथियों को एकत्रित किया तथा बड़ी संख्या में एक साथ सरकारी गोदामों के तालों को तोड़कर अनाज के बोरे गाँव-गाँव में पहुँचा दिये। इतना अन्न एकत्रित हो गया कि पशुओं को भी कूटकर पानी में भिगोकर खिलाया जाने लगा। सरकारी गोदामों को लूटने का सिलसिला तब तक चलता रहा जब तक इंद्र देव ने कृपा नहीं की तथा

जल वर्षा प्रारंभ नहीं हुई। बरसात शुरू होते ही किसान, किसानी में लग गया तथा फसल के आने तक शाक भाजी से उदरपोषण होने लगा। कंदमूल एवं वृक्षों के फल भी भूख मिटाने लगे। पर सत्ता धारियों की प्रतिशोध की भूख तथा दमन की प्यास जाग उठी थी। इसमें हवा देने का काम सत्ताधीशों के दलालों ने किया। परिणाम स्वरूप भारी संख्या में पुलिस बल ने सोनाखान पहुँच कर जमींदार वीर नारायण सिंह को बंदी बना लिया तथा रायपुर जेल में बंदकर दिया। जेल में बंद होने के बाद तो वीर नारायण के मन में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह तथा अपनी धरती को आजाद कराने की आग और धधक उठी। अंग्रेजों की काल कोठरी उन्हें अधिक समय तक कैद में न रख सकी। वे जेल की मजबूत सलाखें तोड़कर बाहर आ गये तथा सीधे सोना खान पहुँच गये। वहाँ लोगों ने उनका जोरदार स्वागत किया।

बाहर आते ही उन्होंने घर-घर में क्रांति की ज्वाला जला दी। उन्होंने एक शक्तिशाली सेना खड़ी कर दी। हर घर का वासी एक सिपाही बन गया। समर में भाग लेने योग्य युवा तो सेना में शामिल हो गये बुजुर्ग पुरुष महिलाएँ एवं बच्चे सेना के सहायक बन गये। परंतु अंग्रेज अधिकारियों को यह कब सहन होता। उन्होंने विप्लव का पूरी तरह से दमन करने के लिए कमिश्नर इलियट को आदेश दिया। जिसने स्मिथ के नेतृत्व में एक बड़ी सेना सोना खान भेज दी। उधर देश में 1857 की आजादी की लड़ाई जोरों पर थी। इधर सोना खान में भी आजादी के परवाने युद्ध के लिए तत्पर थे। 20 नवम्बर 1857 को रायपुर से चली ईस्ट इंडिया कंपनी की फौज 10 दिन में खरोंद, कटंगी, बिटाईगढ़, भटगांव होते हुए 30 नवम्बर को देवरी जा पहुँची। रास्ते में बिलासपुर की सेना भी आ मिली। क्रांतिकारी वीर नारायण के काका देवरी के जमींदार ने भी अंग्रेजों की मदद की। उस सेना का मार्ग दर्शन वही देशद्रोही कर रहा था। अंग्रेज सेना अभी सोना खान से 5 कि.मी. पहले नाले के पास पहुँची ही थी कि वीर नारायण ने उस पर धावा बोल दिया। उस अचानक हमले से अंग्रेज फौजी हक्के-बक्के रह गये। जबतक वे सावधान हो पाते, वीर नारायण की सेना उन्हें चोट पहुँचाकर कईयों को हताहत कर जंगल में विलीन हो गई।

पहले हमले से चौकन्नी अंग्रेज फौज जब सोना खान में घुसी तो सारा गाँव सुनसान था। न कहीं एक बूंद पानी था, न एक दाना अनाज, वहाँ एक भी आदमी या जानवर नहीं था। तब वीरान बस्ती को ही स्मिथ ने आग के हवाले कर दिया। बस्ती को जलता देख वीर नारायण ने गोरिल्ला, छापामार युद्ध शुरू कर दिया। उन्होंने स्मिथ की सेना को चारों तरफ से घेरकर राशन पानी भी बंद कर दिया। भूख प्यास एवं गोली वर्षा से परेशान अंग्रेज फौज तबाही की कगार पर पहुँच गई। तभी गद्दार एवं देशद्रोही कटंगी के जमींदार ने भारत माता के माथे पर विजय का टीका अपने काले कारनामों से नहीं लगने दिया। उसने अपनी सेना व रसद भेज कर बाजी पलट दी। वीर नारायण की सेना दो पाटों के बीच घिर गई। पर आखिरी गोली तक युद्ध चलता रहा। अन्त में क्रांतिकारी वीर नारायण को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें 19 दिसंबर 1857 को रायपुर जेल में फांसी के द्वारा शहीद कर दिया गया। अंग्रेजों ने उनके शव को कई दिनों तक चौराहे पर लटका रखा था। ताकि लोग दहशत में आयें तथा विप्लव का प्रयास न करें।

परंतु आजादी के दीवाने कब रुक सकते थे वे संघर्ष करते रहे। शहीद होते रहे। स्वतंत्रता यज्ञ में अपनी जीवन आहुति समर्पित करते रहे। राजा वीर नारायण सिंह का बलिदान आज भी लोग आदर से याद करते हैं। रानी दुर्गावती केपुत्र राजा वीर नारायण का त्याग उन्हें अपने शहीद वीर नारायण सिंह में दिखाई देता है।

जिन विद्वान लेखकों से पुस्तक लेखन में सहायता मिली है। उन्हें हृदय से धन्यवाद तथा आभार–लेखक

वीर शिरोमणी चकरा बिशोई-उड़ीसा के महान क्रांति वीर

उड़ीसा प्रदेश के जंगलों में फुलवानी बोध मंडल की पर्वत मालाओं में कंध वनवासी रहते हैं। उड़ीसा प्रदेश का बड़ा भाग 1803 तक ईस्ट इंडिया कंपनी के कब्जे में आ गया था। परंतु फुलवानी क्षेत्र स्वतंत्र रहा तथा वह अपनी आजादी के लिये लगातार संघर्ष करता रहा।

फुलवानी का क्षेत्र पर्वतों, सुरम्य सघन वनों तथा कल कल बहती नदियों से परिपूर्ण रहा है, यहाँ वीरता से परिपूर्ण कन्ध जाति का निवास है। 9वीं सदी में यहाँ भंज वंश का राज्य था। 10वीं सदी के अंत में यहाँ के अंतिम ब्राम्हण राजा गन्ध मर्दन थे। वे निस्संतान थे। अत: उन्होंने अपने जीवन काल में ही समीपस्थ कुंजहार राजघराने के वंशज राजा अनंग देव को अपना

राज्य सौंप दिया था। राजा अनंग देव ने शासन को 24 वर्गों में बांटा था जो मुट्ठे कहलाते थे। प्रत्येक मुट्ठे के प्रधान बिशोई कहे गये। इन्हीं बिशोइयों में चकरा बिशोई और उनके चाचा घौंरा बिशोई 19वीं सदी में घुमसर के राजा धनुर्जय भंजदेव की सेना में सेना नायक के पद पर थे। वीरवर चकरा का जन्म 1823 में गंजाम जिले के चक्रगढ़ गांव में हुआ था। चकरा विशोई वीर ही नहीं अपितु समाज सुधारक भी थे। उन्होंने समाज की कई कुरीतियों को समाप्त कराया था। यहाँ तक कि नरबलि प्रथा भी बंद करा दी थी। घुमसर राज्य की सेना में सभी कंध वीर थे। सन् 1835 तक ईस्ट इंडिया की सेना ने फुलवानी के आसपास का सारा क्षेत्र अपने अधिकार में कर लिया था। परंतु एक छोटे पहाड़ी राज्य को जीत नहीं सके। घुमसर की सेना ने चकरा एवं घौरा बिशोइयों के नेतृत्व में आधुनिक शस्त्रों से लैस कंपनी की सेना की गति रोक दी। कई बार हुए युद्धों में अंग्रेजों को मुँह की खानी पड़ी। यहाँ तक कि कर्नल रसेल ने अपने संस्मरण में घुमसर की लड़ाई को उड़ीसा का सबसे वीभत्स तथा कठिन युद्ध बताया था। परंतु आदिवासियों के तीर कमान जब आग उगलती बन्दूकों के आगे थकने लगे तब राजा घुमसर उदयगिरि वापस आये। वहाँ मुट्ठा प्रधानों तथा कन्ध योद्धाओं की सभा में सभी ने रक्त की अंतिम बूंद तक युद्ध करने का संकल्प लेते हुए निज रक्त से माथे पर तिलक लगाते हुए रक्त शपथ की विधि संपन्न की। इस संकल्प के कारण स्थान का नाम ही टीकावली कहलाया। परंतु सन् 1836 के अंत में राजा का देहान्त हो गया तब चकरा बिशोई और घौंरा बिशोई ने युद्ध का ध्वज ग्रहण कर गुरिल्ला लड़ाई जारी रखी। अब उन दोनों वीरों ने अपना मुख्यालय टीकावाली से बदलकर विशीपद में स्थापित किया। उधर रसेल की छावनी सन् 1869 तक गंजाम जिले में रसल कुंड में पड़ाव डाले रही। (आजादी के बाद इस स्थल का नाम भंज नगर रख दिया गया।) पर रसेल की सेना को यहाँ से बढ़ने का साहस नहीं हुआ। उधर चकरा बिशोई बार बार छावनी पर हमला करके उसे नुकसान पहुँच रहे थे। चकरा बिशोई की कीर्ति से सारा क्षेत्र प्रभावित था। आसपास के इलाकों के राजा मुसीबत पर उन्हें मदद के लिए बुलाते थे। वे मदद कर उनको विपत्ति से मुक्ति भी दिलाते थे। सन् 1847 में मेजर मेकफरसन ने बौध के राजा को धोखे से बंदी बना लिया। यह खबर पाते ही चकरा बिशोई ने बाज की तरह झपट कर मेकफरसन की पकड़ से

राजा को छुड़ा लिया।

सन् 1854 में मेक्लीन को फुलवानी को जीतने के लिये भेजा गया। अंग्रेज सेना अनुगुल की ओर से दर्रे की ओर बढ़ी। इस दर्रे के अघेर गोड़ा में चकरा बिशोई के जांबाजों ने दोनों तरफ से उसे घेर लिया। दर्रा इतना सकरा था कि घोड़े मुड़ नहीं पा रहे थे। फलतः उनकी लगामे काटनी पड़ी। इतनी सारी लगामों के ढेर के कारण उसे पहाड़ी को सिकुड़ी पहाड़ी कहा जाने लगा। पराजित अंग्रेज सेना वापस भागी तथा चकापाद पहुँची। वहाँ के कुछ देशद्रोही मुट्ठा प्रधानों ने उनका साथ दिया। इस तरह 1880 के अंत में देश द्रोहियों के कारण विरक्त वीरवर चकरा बिशोई ने अज्ञातवास ले लिया तबसे आज तक उन महान देश भक्त स्वतंत्रता सेनानी वीर का पता नहीं चला।

किसानों एवं आदिवासियों का विप्लब :-

ब्रिटिश शासन में झूम एवं पडु पद्धतियों से किसानों पर खेती करने की प्राचीन विधियों पर पाबंदी लगा दी गई थी। जमीन बदला खेती की विधि पर रोक से किसानों ने विप्लव किया। यह विप्लव 1813 से 1830 तक चला इसमें हजारों किसानों आदिवासियों ने भाग लिया। सैकड़ों शहीद हुए। इस तरह किसानों ने अपनी पारंपरिक व्यवस्था की खातिर अपने बलिदान दिये।

अध्याय-4

महावीर आदिवासी राघो जी

ईस्ट इंडिया कंपनी के खूनी पंजे एक ओर भारत की स्वतंत्र रियासतों की जकड़ते जा रहे थे। वहीं दूसरी ओर आमजन आदिवासी जो शुरू से ही आजाद तबियत के रहे हैं, उनकी खिलाफत में लाम बंद भी हो रहे थे। महाराष्ट्र के कई इलाकों में संघर्ष शुरू भी हो गया था। इसलिये 19वीं सदी का प्रारंभ इसके लिए जाना जाता है। महाराष्ट्र में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह की पहली ज्वाला जुन्नर क्षेत्र में प्रज्जवलित हुई वहाँ से शीघ्र ही अहमद नगर नासिक, ठाणा तक फैल गई। सन् 1830 में इनके संघर्ष की अगुआई भाउखरे, चिमन जी, दरबारे तथा जाधव जी ने की। पर पुणे के अबेगाँव के अंतर्गत घोड़े गाँव के लोगों ने अंग्रेजों का साथ दिया। फलस्वरूप महादेव कोली वीरों की पराजय हुई तथा उनके अनेक क्रांतिवीरों को अपने प्राण विसर्जित करने पड़े।

सन् 1838 में समगढ़ दुर्ग के समीप कोली क्रांतिकारियों ने ईस्ट इंडिया कंपनी की फौज से टक्कर ली। इन कोलियों के सरदार राघोजी मांगरे थे।

युद्ध में 85 के लगभग कोली वीर बंदी बनाये गये पर राघोजी मांगरे के नेतृत्व में कोलियों ने अंग्रेजों का खजाना लूट लिया तथा तीन गाँव भी अपने कब्जे में कर लिये। वीरवर राघोजी अंत तक अंगरेजों से लड़ते रहे। कोलियों तथा भीलों ने राघोजी के नेतृत्व में फिर नासिक संगमनेर, अकोला आदि में लड़ाई छेड़ दी। सरकारी कोष लूट लिया, दुर्गपतियों को भागने पर विवश कर दिया। परंतु देशद्रोहियों की मदद से अंग्रेजों ने फिर 200 के लगभग क्रांतिकारियों को बंदी बना लिया। उनमें से 100 तो जेल में पानी एवं भोजन के अभाव में शहीद हो गये। शहादत का समाचार पाकर राघोजी जो बच निकले थे, के द्वारा फिर संघर्ष का बिगुल फूँका गया तथा बड़ी संख्या में युवा संघर्ष के लिये सन्नद्ध हो गये राघोजी के नेतृत्व में क्रांतिकारियों की सेना पर अंग्रेजों ने हमला किया। अंग्रेजों से युद्ध कर रहे राघोजी की मदद बापू मांगरे ने की परन्तु वे भी शहीद हो गये। राघोजी फिर बच निकलने में सफल हो गये। अंग्रेजों ने उन्हें गिरफ्तार करने के लिए 5000 रुपए का इनाम घोषित कर दिया जो उस समय की बड़ी रकम थी। गिरफ्तारी से बचने के लिए राघोजी कोंकण चले गये। वे अपने साथियों के साथ लगातार छापामार लड़ाई में अंग्रेजों पर हमला करते हुए उन्हें परेशान करते रहे। कई बार उन्होंने अंग्रेजों के काफिलों पर हमला किया तथा उन्हें बरबाद कर दिया।

इस तरह संघर्ष की अगली रूपरेखा के लिए वे अपने साथी रामचंद्र गणेश गोरे तथा महादेव कोली के साथ जब साधुओं के वेश में जा रहे थे तब मुखबिर के द्वारा खबर पाकर ईस्ट इंडिया कंपनी की पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। बाद में 2 मई 1848 को उन्हें ठाणा जेल में फांसी दे दी गई। वीर राघोजी एवं उनके साथी सच्चे अर्थों में क्रांतिकारी थे। वे देश की स्वतंत्रता के लिए जिए तथा उसी के लिये प्राण त्याग दिये।

अध्याय-5

गोंड वीर कुमरा भीमू

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध का वाकया है। आसिफाबाद से लगभग 13 कि.मी. दूर सांकोपाली ग्राम के गोंड परिवार में एक बालक का जन्म हुआ जिसे कुमरा भीमू का नाम दिया गया। मध्य प्रदेश में एक गोंड जाति का ग्राम है जिसे कुमारी कहते है। उस गाँव के लोग पहले विवाह नहीं करते थे। वे आजीवन कुंआरे रहकर गोंड सेना में शामिल रहते थे। गोंड वीरांगना तिलकावती भी कुमारी गाँव की थीं जो बाद में लांजी बालाघाट की रानी बनी तथा आसफ खां से युद्ध में शहीद हुईं थी। गोंड समाज में कुमरे गोत्र भी है।। युवा होने पर कुमरे भीमा अपनी जाति एवं अन्य वनवासियों की सेवा में लग गये। वैसे भी प्राचीन काल से तेलगू गोंड समाज की भाषा थी तथा उनके आदि पुरुष यादव राय भी वहीं के निवासी थे। वह अंग्रेजों के द्वारा दमन चक्र चलाये जाने का समय था। सांकोपाली गाँव में दमन चक्र से बचने के लिए कुमरा भीमू सभी ग्रामीणों को लेकर बाबिझेरी क्षेत्र के पहाड़ों पर रहने लगे। परन्तु वहां भी भ्रष्ट अंग्रेज अफसरों ने इनसे घूस लेकर भी इन्हें बेदखल कर दिया। अब कुमरा भीमू ने झोरघाट में नई बस्ती बसाकर स्वजनों के साथ रहना शुरू कर दिया। साथ ही उसकी वैधता की सनद पाने के लिए हैदराबाद आये। यहाँ भी उन सबके साथ बेईमानी हुई, भ्रष्ट लोगों ने इनका मालभत्ता हथिया कर झूठा अनुमति पत्र थमा दिया। जब इन्हें हकीकत मालूम हुई तब इन्होंने फिर आधिकारियों से मिलकर आपबीती सुनाई पर किसी के कान में जूँ तक नहीं रेंगी। अंग्रेजों ने इन्हें फिर बेदखल करने सशस्त्र पुलिस बल भेजा। संघर्ष हुआ शस्त्रों के अभाव में गोंड वीर पराजित हुए तथा वीर कुमरा भीमू को गोली लग गई। जब अत्याचार की अति हो गई तब कुमरा भीमू ने क्रांतिकारी पथ अपनाया तथा अपनी धरती, अपना जंगल पाने के लिए सभी

साथियों को संगठित किया तथा अंग्रेजों की बंदूकों के आगे तीरों की दीवार खड़ी कर दी। कई दिनों युद्ध चलता रहा। अचूक बाण वर्षा एवं गुलेलों की तीखी पथरीली मार के आगे अंग्रेजों की आग उगलती बंदूकें भी थम गई। कलेक्टर तक खबर पहुँची। उसने फिर भारी पुलिस बल भेजा पर गोंड महिलाओं ने पत्थरों, गरम पानी के प्रहार से उन्हें भागने पर मजबूर कर दिया। इस तरह काफी दिनों तक युद्ध चलता रहा पर गोंड वीरों ने बलिदान देना उचित समझा समर्पण नहीं किया।

अन्त में अंग्रेजी फौज को मैदान में उतारा गया। पर वीरवर कुमरा भीमू ने आत्म समर्पण नहीं किया। तीरों पत्थरों, गरम पानी का युद्ध जारी रखा। परन्तु अंग्रेजों की बेपनाह ताकत के आगे वीर गोंडों ने अपना बलिदान कर दिया। क्रांतिवीर कुमरा भीमू लड़ते-लड़ते शहीद हो गये। गोंडों की लाशों के ढेर लग गये। उन लाशों को रोंदते हुए अंग्रेज सेना ने बचे खुचे सेनानियों को बंदी बना लिया पर बहादुर कुमरा भीमू ने मातृभूमि की रक्षा के लिए निज प्राण अर्पित कर दिये। निज रक्त का अर्पण कर दिया पर समर्पण नहीं किया।

मण्यम् क्रांति :- मण्यम गोदावरी के तट पर आंध्रप्रदेश में कोया जनजाति का व्यापारिक केन्द्र रहा है। वहाँ आदिवासी महिलाएं सामान बेचने जातीं थीं। अंग्रेज उनके साथ छेड़खानी करते थे। एक बार एक अंग्रेज अधिकारी ने एक आदिवासी महिला के साथ बलात्कार किया। उस पर आदिवासी चंद्रैया ने साथियों के साथ गुरिल्ला युद्ध छेड़ दिया। गुरिल्ला युद्ध में वीर चंद्रैया को वीरगति प्राप्त हुई। इस तरह जनजातीय अस्मिता की रक्षा के लिए वीर चंद्रैया के साथ अनेकों ने बलिदान दिया।

अध्याय-6

महाराणा प्रताप के साथी स्वतंत्रता के अग्रदूत-पुँजा भील

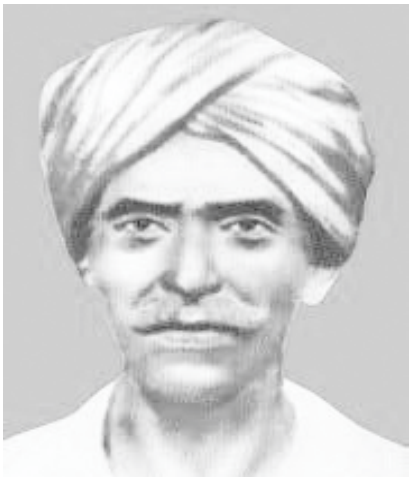

इतिहास में महाराणा प्रताप के शौर्य एवं वीरता की दास्तान स्वर्ण-अक्षरों में अंकित है। मुगल बादशाह अकबर की साम्राज्य लिप्सा को प्रबल आघात प्रदान करने वाले महाराणा प्रताप के साथी वे वनवासी भील योद्धा थे जिन्होंने जीवन भर उनकी सहायता की तथा अंत तक उनकी प्राण रक्षा तथा माँ भारती की सेवा करते रहे। ऐसे महान भील वीरों के सरदार थे झाड़ौल तहसील के मोपट परगने के पानखा गाँव के योद्धा पुँजा भील। हल्दी घाटी 'इन भीलों एवं महाराणा प्रताप के बाहुबल, वीरता एवं देश प्रेम की भावना के कारण विश्व प्रसिद्ध हो गई।' इस घाटी ने अकबर का घमण्ड चूर-चूर कर दिया था। यह क्षेत्र सम्पूर्ण रूप से वनाच्छादित, पर्वतों कंदराओं, घाटियों से भरा हुआ था। यहाँ के गिरिश्रंगों पर पहुँच पाना हर किसी के लिए संभव नहीं था।

18 जून 1576 के दिन हल्दी घाटी का युद्ध हुआ था। इसके लगभग

12 साल पहले अकबर ने आसफ खां को भेजकर शांति प्रिय क्षेत्र गोंडवाना की विदुषी, वीर तथा धर्मप्राण रानी दुर्गावती को धूर्ततापूर्वक घर के भेदियों की मदद से आत्म बलिदान करने पर विवश कर गोंडवाना को जीत लिया था। वहाँ बहादुर गोंड वनवासी थे तो यहाँ भीलों से मुकाबला था। पुँजा भील के साथ चार सौ से अधिक बहादुर गुरिल्ला युद्ध में कुशल वन भूमि के ज्ञाता भील योद्धाओं का दल था। अकबर की दुर्दान्त सेना जब राणा प्रताप की सेना पर हमला करने जा रही थी तभी पुँजा भील ने रास्ते भर में उनकी नाक में दम कर दिया। रातों में शिविरों में आग लगाना, रसद के काफिलों को लूट लेना, घाटियों से गुजरने पर पत्थरों की वर्षा करना, पेड़ों की सघनता में छुपकर तीरों से मुगल सैनिकों को मौत के घाट उतार देना उनके लिये सामान्य बात थी। उधर राणा के बहादुर राजपूत भी जान की बाजी लगाकर अकबर की फौज का कत्ले आम कर रहे थे। यद्यपि लाखों की संख्या में मुगल उजबेक, मंगोल सैनिकों की बाढ़ के आगे महाराणा प्रताप परास्त हुए थे। परंतु उन्होंने युद्ध करना नहीं छोड़ा। वे पुँजा भील के वीरों की सहायता से गुरिल्ला युद्ध करते रहे।

एक समय आया जब महाराणा प्रताप को परिवार एवं साथियों के साथ घास के बीजों की रोटी पर निर्भर रहना पड़ा था। वह इसलिए कि पुँजा भील एवं उनके साथी महाराणा को पकड़ने के लिए अकबर के द्वारा भेजे गये सैन्य बल के सफाये में लगे थे। मुगल दल जब महाराणा के ठिकाने की ओर बढ़ रहा था तब उसे घाटी में रोककर दस दिनों तक उससे युद्ध करने वाले पुँजा भील एवं उनके जांबाज ही थे। यही कारण रहा कि महाराणा तक खाद्य फल आदि नहीं पहुँच पाये। बाद में पुँजा भील ने मुगल दस्ते को समाप्त कर शीघ्र ही महाराणा तक खाद्य सामग्री पहुँचा दी थी। महाराणा को सहायता पहुँचाने के हर रास्ते पर अकबर का पहरा था। प्रसिद्ध धनपति भामा शाह जब स्वर्ण एवं रजत सिक्कों की बोरियों के साथ महाराणा तक नहीं पहुँच पा रहे थे तब पुँजा भील ने ही उन्हें असबाब के साथ पर्वतों घाटियों से होकर महाराणा तक पहुँचाया था। बाद में पुँजा ने सैनिकों की नयी भरती में भी महाराणा की मदद की थी। इसके साथ ही पुँजा भील के गुरिल्ले अकबर के सैन्य शिविरों पर

भी छापामार हमले करते रहे। मुगल इतिहासकारों ने स्वयं लिखा था कि महाराणा के भीलों का नगरों में भी इतना आतंक था कि नगरों के चारों ओर गहरी खाईयाँ खोद दीं गई थी। ऊँची दीवारें बना दी गई थी। सैनिकों तक का रात में सोना मुश्किल हो रहा था। यद्यपि हल्दी घाटी के युद्ध में महाराणा प्रताप की पराजय हुई थी पर अकबर संपूर्ण मेवाड़ को कभी भी जीत नहीं सका था। महाराणा ने भी कभी उसकी आधीनता स्वीकार नहीं की। अंत में उन्होंने पुँजा भील को सम्मान देते हुए भील बहुल चावण्ड में नई राजधानी स्थापित की। पुँजा अंत तक महाराणा प्रताप के साथ रहे। 1597 में जब महाराणा की मृत्यु हुई तब उन्होंने पुँजा भील को सेना नायक का भार सौंपा था। इस तरह देश भक्त, स्वतंत्रता सेनानी पुँजा भील और उनके भील साथी जीवन भर मुगलों से मेवाड़ की रक्षा करते रहे।

अलौकिक टंट्या मामा :- टंट्या भील के बारे में अनेक अद्भुत कहानियां प्रचलित हैं। कहते है कि वे एक बार में एक ही समय 1700 ग्राम सभाओं को संबोधित कर लेते थे। इसलिए उन्हें पकड़ने के लिए तैनात 2000 सिपाही भी गिरफ्तार करने में अक्षम रहे। एक बार वे एक विवाह समारोह में बेटी की मामी बन कर महिला वेष में जा पहुंचे तथा अंग्रेज इंस्पेक्टर को बेवकूफ बनाकर उसी के साथ नृत्य करने लगे। एक बार अंग्रेज अधिकारी के नाई बनकर उसकी नाक काट ली।

अध्याय-7

धरती के देवता- स्वराज्य के उद्घोषक : बिरसा मुंडा

देव पुरुष बिरसा के जन्म स्थान का दावा उलिहातु और बम्बा दोनों गाँवों के लोग करते है। इसी तरह जन्म दिवस में भी मतभेद हैं पर जन्म तारीख 15 नवम्बर 1875 ही उपयुक्त मानी गई है।

बाँस की खपच्चियों वाला घर, घर में जगह-जगह गरीबी के निशान, खेतिहर पिता सुगना, स्नेहमयी माता सभी देवतुल्य बिरसा के आगमन की खुशी मना रहे

थे। जन्मते ही आकाश में पुच्छल तारा निकल आया। गाँव के वृद्धजन बोल उठे 'लो आया हमारा उद्धार करने वाला।' 'पिता को तो भरोसा नहीं हुआ पर माता का हृदय प्रफुल्लित हो उठा वे बोल उठी- अवश्य यह मेरा पुत्र आबा है, तो निश्चित है कि अब सबका उद्धार होगा।' बृहस्पतिवार में जन्म होने के कारण उनका नाम बिरसा रखा गया। कुछ बड़े होने पर बिरसा मुंडा को उनके पिता उन्हें खरंगा उनके मौसा के यहाँ छोड़ आये। वहाँ वे दिन भर मौसा की बकरियाँ चराते थे। बकरियाँ तो खुद चरती रहतीं थी, पर कभी किसी के खेत में घुसकर फसल खा जातीं तो कभी भेड़िये का शिकार बनतीं पर बिरसा की बाँसुरी नहीं थमती थी। परिणाम यह हुआ कि एक दिन मौसी ने पिटाई कर दी। सो बिरसा जी नाराज होकर घर भाग आये। अब पिता ने उन्हें अपनी ससुराल अयुभातु में रिश्तेदारों के पास छोड़ दिया। वहाँ ईसाई मिशनरी की पाठशाला थी। वहाँ लोअर प्राथमिक परीक्षा पास करने के बाद वे जर्मन मिशनरी की पाठशाला में पढ़ने लगे। गरीबी से परेशान पिता ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। पिता का नाम मसीह दास रखा गया। बिरसा जी का नाम वपतिस्मा के बाद दाउद रखा गया। उन्हें चाईबासा के लूकरन विद्यालय में भेजा गया। यहाँ आबा बिरसा को ईसाई कुचक्र का ज्ञान हुआ और वे उनके विरोधी हो गये। उन्होंने प्रसिद्ध पादरी डॉ. नट्रोर के मुँह पर ईसाइयत की घोर निंदा की तथा कहा- 'साहब साहब एक टोपी' उन दिनों सम्पूर्ण क्षेत्र में अंग्रेजों, यूरोपियनों एवं ठेकेदारों का अन्याय व्याप्त था। कोल मुंडा आदिवासियों का दमन चरम पर था। उनकी फसलें हड़प ली जाती थीं। उनसे बेगार कराया जाता था। सूखी रोटी देकर 18 घंटे काम कराया जाता था। उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में अंग्रेजों द्वारा छोटा नागपुर क्षेत्र पर बलात् कब्जा जमाने के बाद अत्याचारों का पहाड़ मुंडा, कोल आदिवासियों पर टूट पड़ा। सम्पूर्ण 12500 वर्ग मील के क्षेत्र के लिए एक अंग्रेज अफसर नियुक्त था। सन् 1809 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने जमींदार पुलिस की नियुक्ति की थी। जो इन कोलों के लिए आफत बन गयी थी। प्राचीन कोल मुंडा वनवासियों की व्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र में खुष्टकट्टी कोलों, जिनके पूर्वजों ने सबसे पहले वन साफकर खेती की जमीन बनाई हो, मुंडा यानी प्रधान कहलाते थे। कई मुंडाओं के प्रमुख मानकी या पट्टी प्रधान होते थे। ये ग्राम के प्रधान होते थे पर उनका गाँव की संपत्ति पर स्वामित्व नहीं होता था अपितु वे समाज के व्यवस्थापक होते थे। वे सबके समान,

परन्तु ग्राम प्रमुख होते थे। इनके द्वारा गाँव के विवादों का निपटारा होता था। परंतु कंपनी के शासन में इनका अंत हो गया तथा उनके स्थान पर कंपनी के भ्रष्ट तथा जमींदारों के स्वार्थी तत्वों की अदालतें एवं पुलिस काबिज हो गई। सदियों से अपनी जमीन का मालिक खुष्टकुट्टी कोल अपनी ही जमीन पर जमींदारों, ठेकेदारों का गुलाम हो गया। सन् 1789 के मुंडा विद्रोह से लेकर 1831-32 तक समूचा छोटा नागपुर क्षेत्र विप्लवों की ज्वालाओं में झुलसता रहा। इसके बाद फिर मिशनरियों का कुचक्र शुरू हुआ नियम बना कि केवल ईसाई वनवासी ही भूमि स्वामित्व पा सकेंगे। इस पर सन् 1858 में फिर मुल्की/ सरदारी लड़ाई के रूप में वनवासी विप्लव हुआ।

इन सबका ज्ञान होने पर कुटिल ईसाई मिशनरियों के कुचक्र से बिरसा जी एवं अन्यों ने ईसाई धर्म का बहिष्कार कर दिया। बिरसा जी ने कण्डेर में एक मुंडा के यहाँ काम करना शुरू कर दिया था। सन् 1891 में वे तोरण थाने के गोड बेड़ा गाँव के आनन्द पांडे के संपर्क में आये। आनंद पांडे बन्द गाँव के जमींदार जगमोहन सिंह के यहाँ मुंशी थे। वे वैष्णव थे, रात्रि में बिरसा जी को महाभारत, रामायण आदि सुनाया करते थे। इसका प्रभाव पड़ा उन्होंने शिकार करना त्याग दिया। वे सात्विक वैष्णव हो गये। उन्होंने अपनी धरती को विदेशियों के पंजों से मुक्त कराने की शपथ ली तथा आनंद पांडे को गुरू मानकर उनसे आशीर्वाद मांगा। आनंद ने उन्हें हृदय से लगाकर, अश्रुपूरित नेत्रों से, गद्‌गद् स्वरों में आशीर्वाद दिये। इसके बाद बिरसा जी सरदारी युद्ध में सक्रिय हो गये। उन्होंने गाँव-गाँव में घूम घूमकर पादरियों के खिलाफ जनसंगठन बनाए। उन्होंने आयुर्वेद का अध्ययन किया। पुराणों को जाना तथा धर्म ग्रंथों के तत्व को ग्रहण किया। वनवासी उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होने लगे। पर घर की आर्थिक स्थिति गंभीर थी भोजन की भी व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। कभी कभी सभी को भूखे रहना पड़ता था। इस कारण एक दिन उन्होंने कब्र में दफन शव से कुछ जेवर उतारकर बाजार में बेचकर चावल आदि खरीदा तथा घर ले जाने लगे। पर खुद अपने कृत्य पर आत्म ग्लानि का अनुभव कर उन्होंने वह सब फेंक दिया तथा जंगलों में घूमने लगे। उन्हें लोग बलु बिरसा कहने लगे।

अचानक एक दिन बिरसा जी देदीपामान मुख मंडल तथा दृढ़ निश्चय के

साथ गाँव में लौटे तथा चौपाल पर खड़े होकर घोषणा की :- मुझे सिंग बेंगा ने दिव्य शक्ति दी है। अब मैं रोगियों को ठीक कर सकता हूँ। अब में धरती को विदेशियों से मुक्त करूँगा। आप सब कंपनी का आदेश न माने। बिरसा जी के आव्हान का व्यापक असर हुआ। वनवासी अब डर छोड़ कर जमींदारों, सरकारी कर्मचारियों से बहस करने लगे। दूर दूर से बिरसा जी के दर्शन को वे आने लगे। रोगी उपचार पाने लगे। बिरसा जी सबसे कहते थे- वह दिन दूर नहीं जब पादरी सरकारी अफसर और खुद रानी विक्टोरिया हमसे दया की भीख मांगेगी। उनका नारा था- 'आओ हम सब इस महारानी राज का खात्मा करें। हमारा राज आ रहा है। अबु आ राज ऐते जना, महारानी राज टुण्डु जना।' उनके इस नारे का उत्तर सैकड़ों कंठ देते थे। वह वर्ष 1895 का समय था जब उन्होंने उस समय स्वराज का स्वर बुलंद किया था जब गांधी स्वतंत्रता आंदोलन में आये भी नहीं थे। बिरसा जी ने आदेश दिया कि फसल अब मत बोना। हम जंगली उपज पर जीवन यापन करेंगे। फसल तो जमींदार, अंग्रेज ले जाते थे। इस तरह असहयोग आंदोलन की शुरुआत उन्होंने की थी। इससे बौखलाकर ब्रिटिश पुलिस 8 अगस्त 1895 को बालकोड आई। परंतु हजारों वनवासी एकत्रित हो गये इसलिए खाली हाथ वापस लौट गई। अब बिरसा जी ने सशस्त्र सेना तैयार कर ली तथा अंग्रेजों, जमींदारों पर हमले होने लगे। इस पर 13 अगस्त को कमिश्नर ने जिला पुलिस अधीक्षक मीयर्स के नेतृत्व में जमींदार जगमोहन सिंह की जमींदारी पुलिस तथा भारी नियमित पुलिस बल को रात के अँधेरे में चुपचाप गाँव में भेजा जहाँ दिन भर के थके बिरसा जी आराम कर रहे थे। अचानक घर को घेरकर पुलिस ने बिरसा जी को पकड़ लिया तथा हथकड़ी बेड़ी से जकड़ दिया। गाँव वालों को पता भी नहीं चला और उन्हें रांची के जेल में बंद कर दिया। खबर पाते ही हजारों की संख्या में वनवासी दौड़ पड़े। पर सैकड़ों पुलिस बल और सेना ने उन्हें रोक दिया। कमिश्नर ने मुंडा कोलों को निरुत्साहित करने के लिए बालकाड में खुली अदालत लगाकर मुकदमा चलाया। हजारों वनवासी एकत्रित होकर बिरसा जी को छुड़ाने का प्रयत्न करने लगे। इनका नारा था 'बिरसा आबा को छोड़ो या हमें भी पकड़ो' बड़ी कठिनाई से कमिश्नर ने बिरसाजी को दो साल की कड़ी कैद तथा 500 जुर्माने की सजा सुनाई। 15 नवम्बर 1895 को रांची में सुनाए फैसले के बाद उन्हें जेल भेज दिया गया। जब बिरसा

जी जेल में थे तक एक साल बाद छोटा नागपुर में भीषण अकाल पड़ा था। उसमें हजारों कोल मुंडा काल कवलित हो गये थे। उसी समय इंग्लैंड महारानी विक्टोरिया का साठवां जन्म वर्ष मना रहा था। बिरसा जी को 30 नवम्बर 1897 को जेल से छोड़ा गया। जेल से मुक्त होने पर बिरसा जी ने नवरत्न, चुटिया तथा जगन्नाथपुर की तीर्थ यात्रा की। उन्होंने साथियों के साथ रांची के निकट वृंदावन की भी तीर्थ यात्रा की तथा श्री कृष्ण से आशीर्वाद प्राप्त किया। रांची से 10 कि.मी. दूर जगन्नाथ मंदिर में भैंसे की बलि दी जाती थी। बिरसा जी ने उसे बंद कराने के लिए जनमत जाग्रत किया। बिरसा जी ने ठाकुर द्वारा जगन्नाथ पुरी में 15 दिनों तक निराहार व्रत कर तप ध्यान किया। वहाँ से लौटकर फरवरी 1898 में उन्होंने चालकाड में एक बड़ी सभा की। हजारों वनवासी लाल सफेद झंडे लिए बिरसा गीत गाते एकत्रित हो गये। उस सभा में उन्होंने अंग्रेजी शासन, पादरियों तथा उनके देशी एजेंटों को ठिकाने लगाने का आव्हान किया। उन्होंने एटके ग्राम के गया मुंडा को प्रधान सेनापती बनाया। कई भरोसेमद मुंडाओं को मंत्री बनाया। सेनाओं का मुख्य केन्द्र खूंटी निर्धारित किया गया। डुम्बारी चुरू में भी प्रतिनिधि सभा हुई। उसमें शत्रुओं पर हमला करने के तरीके बताये गये। सन् 1899 के बड़ा दिन को रात में गया मुंडा ने गुटुहातु सोयको कुडापुर्ति और आसपास के क्षेत्रों से सैनिकों को डुम्बारी बुरू बुलाया। उन्होंने तीन दल बनाये तथा सर बादाग मिशन, मुदु, बुढ़जू मिशनों पर हमला करने का आदेश दिया। स्वयं गया मुंडा ने 25 दिसम्बर 1899 को सरबादाग मिशन पर हमला किया तथा उसे आग के हवाले कर दिया। इसी तरह अन्य मिशनों पर भी हमले किये गये। उधर डुम्बारी से बिरसा जी ने 300 साथियों के साथ खूंटी थाने पर हमला किया। थानेदार को मार गिराया। इस तरह हमलों की खबर कमिश्नर के पास पहुँची। तो रांची के कमिश्नर फीवर्स एवं डिप्टी कमिश्नर फील्ड गोरी फौज को लेकर खूंटी की ओर रवाना हुए। 9 जनवरी 1900 को डुम्बारी पर गोरी फौज ने हमला किया। बड़ी संख्या में वनवासी शहीद हो गये। पादरी गाँव-गाँव घूमकर वनवासियों को ईसाई बनो या गिरफ्तार हो का नारा देकर ईसाइयत में वृद्धि करने लगे। जो ईसाई बनता उसे छोड़ देते जो नहीं बनता उसे पकड़ लेते थे।

बिरसा जी सिंह भूमि जिले के जोम्को पाई वन्य क्षेत्र चक्रधरपुर में चले गये। उन्होंने अपनी सेना को पुनः संगठित किया। उस समय रोगोती ग्राम उनका

केंद्र था यहीं पर उनकी पत्नी भी रहतीं थी। जब वे रोगोती के जंगल में थे तो कुछ भेदिये उन्हें गिरफ्तार कराने के लिये उनके समर्थक बनकर उनके पास आये। बिरसा जी उनसे बात करने लगे। इसी दौरान उन भेदियों ने उन्हें पकड़ लिया। वे सात आदमी थे। बिरसा जी ने उनसे संघर्ष किया। परंतु अंत में उन सातों ने उन्हें बाँध दिया। पुलिस ताक में थी। पुलिस ने बिरसा जी को बंदी बना लिया तथा नन्द गाँव के रेस्ट हाउस में बंदकर दिया। बड़ी संख्या में उनके अनुयायी वहाँ आ गये। बड़ी तादाद में पुलिस भी थी। 80 अनुयायियों तथा बिरसा जी को रांची लाया गया। इसके पहले नन्द गाँव के रेस्टहाउस में बिरसा जी से भेंट करने आनंद पाण्डे और जमींदार आये। बिरसा जी ने अपने गुरू को प्रणाम किया था। रांची जेल में बिरसा जी को डिप्टी कमिश्नर ने कई प्रलोभन दिये, उन्हें जमींदारी देने का लालच दिया गया। परन्तु अपनी धरती को मुक्त कराने के निश्चय से वे नहीं डिगे। उन पर मुकदमा चला। उनके दो साथियों को फांसी दी गई। बाकी को सजाये दी गई। खुद बिरसा जी को रहस्यमय ढंग से मृत बता दिया गया। ऐसी खबर है कि उन्हें जहर दिया गया था।

उनके शव का दाह संस्कार रांची डिस्टिलरी के पास किया गया। इस तरह वैष्णव धर्म के रक्षक धरती के आबा, देवदूत बिरसा मुंडा सचमुच में देवता बनकर संसार से विदा हुए। उन्होंने अपने बलिदान से सनातन धर्म एवं भारत भूमि की रक्षा का संदेश दिया।

बिरसा जी को देव पुरुष तो पहले से ही कहा जाता था। अतः देव पुरुष धरती पर अपना दैवी कार्य सम्पन्न कर देवलोक चले गये।

कोल संग्राम : सन् 1831 से प्रारंभ महान कोल संग्राम में कुमांग गांव के जमींदार मोहम्मद अली के मवेशियों को मुंडा कोलों के द्वारा हांककर अपने गांव ले जाया गया। इस पर आग बबूला हुए जमींदार ने अंग्रेजी फौज के साथ उन पर हमला किया। पर परिणाम विपरीत हुआ। कोल क्रांतिकारियों ने जमींदार का महल और सरकारी दफ्तर जला दिये। इस तरह छोटा नागपुर में कोल मुंडा विप्लव शुरू हुआ।

अध्याय-8

स्वतंत्रता सेनानी जात्रा उरांव : विदेशियों को भारत से खदेड़ने का आव्हान

तान बाबा ताना तान-स्वतंत्रता संग्राम में आदिवासी असहयोग आंदोलन

देश की स्वतंत्रता एवं सनातन धर्म के बारे में फैलाए गए भ्रम को आदिवासी स्वतंत्रता सेनानियों ने हमेशा तोड़ा है। बिरसा मुंडा, ताना भगत जात्रा उरांव, वीर नारायण सिंह सोना खान, चकरा बिशोई आदि सभी के बलिदान ने जता दिया था कि वे स्वतंत्रता संग्राम के आज के अग्रगण्य कहे जाने वाले गांधी एवं नेहरू सरीखे नेताओं से तो बहुत आगे थे तथा उन्होंने आदिवासियों का सनातनधर्मी होने का सत्य प्रस्तुत किया था।

जात्रा उरांव बिहार, अब झारखंड के रांची जिले के गुमला उपमंडल थाना बिशनपुर के नवा टोली गाँव के निवासी थे। उन्होंने 25 वर्ष की आयु में गाँव के मंदिर में घोषणा की- 'मुझे स्वप्न में धर्मेश (धर्मराज) ने दर्शन देकर विदेशियों के पंजे से देश की भूमि को स्वतंत्र कराने का आदेश दिया है।' इस आव्हान का व्यापक असर हुआ जात्रा उरांव समाज सुधारक तथा स्वतंत्रता सेनानी के अग्रदूत के रूप में सर्वमान्य हो गये। इसके लिए उन्होंने एक गान संदेश का सृजन किया- जो इस प्रकार था:-

'तान बाबा ताना तान'

'तुम ताना गोल लेन, ताना बे लेन, ताना हुकुम मान ताना'

'ताना थानानन् ताना पुलिसान ताना'

इसक अर्थ था- खींचो भाई खींचो, सरकार को खींचो, जमींदार को खींचो, व्यवस्था को खींचों कानून को खींचो, थाने को खींचो-

हे भगवान, हमें अधिकार दो, हम शासन करेंगे, हमें ज्ञान दो, नियम

दो, लिखने की शक्ति दो, पढ़ने की शक्ति दो।

इस गीत के साथ जगह-जगह क्रांति का संदेश फैलाते जात्रा उरांव घूमने लगे। अंग्रेज सरकार तथा उनके चहेते जमींदारों से लड़ने के लिये उन्होंने ही पहले असहयोग आंदोलन का सूत्रपात किया। उन्होंने व्रत लिया कि सरकारी काम नहीं करेंगे। अपने यहाँ कोई सरकारी क्रियाकलाप नहीं होने देंगे। सरकारी कर्मचारियों को सहयोग नहीं देंगे।

इसका सबसे पहला प्रयोग धोबी टोली गाँव में वनवासी मजदूरों ने किया। उन्होंने एक सरकारी इमारत के निर्माण में काम करने से मना कर दिया। फलतः सात आदिवासियों को जात्रा उरांव के साथ गिरफ्तार कर चेतावनी देकर छोड़ दिया गया। पर चिन्गारी ज्वाला बन चुकी थी। आदिवासी समूहबद्ध होकर चुंगी चौकी जाते तथा ऊपर वर्णित गीत गाकर वसूली में व्यवधान डालते थे। इन ताना भक्तों की टोलियाँ जगह-जगह सरकारी आफिसों, पुलिस थानों, जमींदारों के समक्ष ताना गीत गाते हुए असहयोग आंदोलन को चलाते रहे। इन्होंने कुसमी थाने पर भी प्रदर्शन किया। जहाँ इन पर गोली चली तथा अनेक आदिवासी शहीद हो गये।

सन् 1921 में कांग्रेस के मंच से स्वतंत्रता आंदोलन में आने के बाद गांधी जी यहाँ आए तब उन्हें पता चला कि असहयोग आंदोलन तो यहाँ पहले से ही चल रहा था। उन्होंने ताना भक्तों को कांग्रेस में शामिल कराया तथा उन्हें टोपियाँ प्रदान की। तब आदिवासियों ने टोपी पहनना चालू किया तथा घरों में तिरंगा लहराने लगे। ताना भक्तों ने 1930 के असहयोग आंदोलन में भाग लिया। 1940 के रामगढ़ अधिवेशन में वे सभी शामिल हुए। सन् 1941 में विशनपुर में दो सौ ताना भक्तों ने 168 घंटों तथा चरखा चलाकर कीर्तिमान स्थापित किया। ताना भक्तों के साथ श्री डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने भी काम किया। इसलिए जो भक्त उनके संपर्क में आए उनके वंशज आज भी अपने को राजन भक्त कहते हैं। ताना भक्त आज भी खादी पहनते हैं। वे गुरुवार के दिन लक्ष्मी पूजन नियमित रूप से करते हैं।

अध्याय-9

पराक्रमी जोरिया भगत एवं क्रांतिकारी रूपा नायक दास

ईश्वर भक्ति में लीन, उनकी शक्ति के अंश से संपन्न विभूति भी स्वतंत्रता संग्राम में अपना योगदान देकर, बलिदान की आहुति परमेश्वर के चरणों अर्पित कर अपना सांसारिक कर्तव्य पूरा कर सकते हैं। इसका उदाहरण वीरवर जोरिया भगत और रूपा नायक दास हैं। जिनके आत्म बलिदान से देश अल्प परिचित है। क्योंकि सारा श्रेय तो राजनीतिज्ञों की झोली में चला गया तथा उनके वंशज उसका उपभोग कर रहे हैं।

गुजरात के रेवाकांठा तथा पंचमहल के घोर वन्य क्षेत्र में नायक दास नामक वन जाति निवास करती है। इसी जाति में जोरिया भगत का जन्म अठारहवीं सदी के उतरार्द्ध में हुआ था। वे प्रारंभ से ही ईश्वर की भक्ति में

समर्पित रहते थे। इस कारण उनमें ईश्वरीय शक्ति का अंश समा गया जोरिया नायक दास के जन कल्याणकारी कार्यों से लाभ प्राप्त करने वाले सभी जन उनके अनुयायी बन गये। बिना किसी स्वार्थ के उनका लोगों के कष्टों के निवारण का कार्य चलता रहा। नायक दास समुदाय के तो सभी उनके अनुपायी बन चुके थे। अन्य आदिवासी भी उनसे संलग्न हो गये। एक दिन जम्बुगोडा के समीप बढ़ेक ग्राम में जन्म लेने वाले जोरिया भगत के मन में विचार आया कि 'हम भक्ति में लीन रहते हैं। भक्ति के बल से समृद्ध हैं फिर क्यों विदेशियों की दासता में जीवन जी रहे हैं?'

इस सवाल के साथ रूपा नायक दास नामक युवक भी जुड़ गया। रूपा के मन में भी अंग्रेजों की दासता के खिलाफ विद्रोह की चिन्गारी उभर रही थी। जोरिया भगत एवं रूपा ने मिलकर विदेशी सत्ता के विरुद्ध विद्रोह का विगुल बजाया। उनके आव्हान पर वनवासी संगठित हुए। उन वनवासी आदिवासियों ने भूमि कर अंग्रेजों की बजाए जोरिया भगत के संगठन को देना प्रारंभ कर दिया। आदिवासियों के सहयोग से उनके संगठन के पास इतनी धनराशि एकत्रित होने लगी जिससे वे आदिवासियों के विकास के लिए कार्य करने लगे।

अब नायक दास संगठन ने जोरिया भगत के नेतृत्व में राजगढ़ की ओर बढ़ना प्रारंभ कर दिया। वहाँ उनका सामना पुलिस बल से हुआ। एक पुलिस अधिकारी ने तपाक से पूछा 'जोरिया भगत तेरे पास कौन सी शक्ति है जिसके बल पर तू शक्तिशाली अंग्रेज सरकार से टक्कर ले रहा है? 'इस पर रूपा के पुत्र गललिया ने तलवार उठाई और कहा- भगत के पास मौत की शक्ति है देख-' यह कहकर गललिया ने अधिकारी का सर काट दिया। थाने के पुलिस वाले भाग खड़े हुए। राजगढ़ पर जोरिया भगत का अधिकार हो गया। अब जोरिया और रूपा के नेतृत्व में आदिवासी सेना जम्बुगोड़ा की ओर बढ़ी। यहाँ भी पुलिस बल पर आदिवासी सेना ने विजय पाई। जम्बुगोड़ा उनके अधिकार में आ गया। पर अब अंग्रेज सरकार चौकन्नी हो गई। भारी सैन्यबल जम्बुगोड़ा भेजा गया। नायक दास वीरों तथा सैन्यबल के बीच घमासान युद्ध हुआ। परंतु बन्दूकों तमंचों के आगे तीर तलवार अधिक समय तक न टिक

सके।' जोरिया भगत ने गांव की ओर लौटने का आदेश दिया। वीर आदिवासी पीछे हटते हुए भी अंग्रेजों से टक्कर लेते रहे। परंतु मार्ग में नदी आ गई। तेज बहाव वाली नदी ने आदिवासियों का रास्ता रोक दिया। अब अंगरेज सेना ने आदिवासियों पर गोलियो की बरसात कर दी। सारे वीर शहीद हो गये केवल जोरिया भगत, रूपा एवं गललिया बचकर निकल गये तथा फिर संगठन बनाने में जुट गये। पर विद्रोह को पूरी तरह कुचलने के लिए अंग्रेज सरकार ने भारी सैन्य बल झौंक कर जोरिया भगत, रूपा एवं गललिया को पकड़ ही लिया। परिणाम निश्चित था। तीनों को फांसी पर चढ़ा कर शहीद कर दिया गया। स्वतंत्रता की बलि वेदी पर प्राणार्पण करने वाले नायक दास वीरों को आज भी पंचमहल एवं रेवाकांठा के आदिवासी श्रद्धा के साथ याद करते है।

हल्दी की गांठे मिट्ठी के ढेले :- इनका वितरण माड़िया आदिवासी बस्तर एवं बीजापुर में अपना विरोध जताने एवं संघर्ष के लिये तैयार होने का संदेश देने के लिए करते थे। सन् 1930 में 31 जनवरी के दिन बीजापुर में इसी तरह का वितरण कर माडिया आदिवासियों ने तीव्र आंदोलन किया था। उनका संघर्ष इतना प्रखर था कि उसे दबाने आये विशाल पुलिस बल को भागकर अपनी जान बचानी पड़ी थी। उस दिन 12 हजार माडिया एवं घुरवा आदिवासी इस आव्हान पर सशस्त्र विप्लव कर रहे थे।

अध्याय-10

क्रांतिकारी पझसी राजा : केरल का विप्लवी फकीर

केरल में यूरोपियन अधिकारियों के अत्याचार की समाप्ति के लिये सन् 1812 में जिन महापुरुष ने क्रांतिकारी आव्हान किया था, उनका नाम पझसी राजा था, उन्हें विप्लवी फकीर कहा जाता था। उस समय त्रावनकोर राजा की सेनायें जो उन यूरोपियन अफसरों का आदिवासियों के दमन में साथ दे रहीं थी, पझसी राजा ने उनका सफाया करने की मुहिम चलाई थी। इसका केन्द्र वायनाड था। सन् 1800ई के बाद यूरोपियन अधिकारियों ने वायनाड एवं केरल के अन्य इलाकों में तबाही मचा रखी थी। तब कतिपय नायरों तथा तिव्या नेताओं ने अंग्रेजों से निर्णायक संघर्ष की तैयारी की। उनके पास साधन नहीं थे। परंतु उत्साह एवं चतुराई के साथ उन्होंने गुप्त रूप से अपनी योजना बनाई वह प्रशंसा के योग्य तो है ही साथ ही वीरोचित रणनीति भी कही जा सकती है। इन आदिवासियों ने पुलों की रेलिंग उखाड़कर तीरों के नुकीले लोहे के फल बनाये साथ ही भालों को भी तैयार किया। उन्होंने शासन एवं पुलिस में काम करने वाले अपने आदिवासी बंधुओं को पुलिस एवं शासन से सहयोग न करने का संदेश भेजा। उसे कुलदेवता की आज्ञा कहा गया जिसके पालन न करने पर उन्हें देव कोप का भागीदार बनना पड़ता था। क्रांति प्रारंभ होने तक किसी को उसकी भनक तक नहीं पड़ी। संघर्ष 25 मार्च 1812 को प्रारंभ हुआ। 'बाट्टा टोपी कर' यानी यूरोपियन एवं पुलिस पर आक्रमण प्रारंभ हो गये। संपूर्ण बायनाड में वह क्रांति शुरू हो गई। कुलपल्ली मुरीकन्नार बायनाड की रक्षक देवी के नाम पर स्थानीय निवासी भी आदिवासी सेना से मिल गये। बायनाड पहुँचने वाले रास्तों पर पहरा लग गया। वहाँ नियुक्त कुरूचिया ब्रिटिश सेन्य दलों की आपूर्ति रोकने लगे। उस क्रांति में पुलिस बल के अनेक सदस्य

भी शामिल हो गये। कोल्कारों के 22 सदस्य (पुलिस के) कुरूचियाओं से मिल गये। उन्होंने अपने शस्त्र भी उन्हें दे दिये। इस तरह वह विप्लव बायनाड का जन आंदोलन बन गया। मेजर जेम्स टग्ग के सैन्य दस्ते समाप्त हो चुके थे। क्रांति इतनी सघन थी कि मैसूर के ब्रिटिश रेजीडेंट ने दो हजार सैनिक तत्काल भेजे थे। मेजर जनरल बेपराल ने भी रंग पट्टनम से एक बड़ा गैरीसन तथा कनानीर से एक बटालियन भेजी थी। भयानक संघर्ष हुआ। हजारों कुरुचियाओं ने वीरगति पाई पर अंत तक उन्होंने समर्पण नहीं किया। संघर्षरत एक भी किसान नहीं बचा। वहीं उनके दमन के लिए भेजे गये सैनिक भी मारे गये। कमांडर वेन्श ने लिखा था कि- 'शायद ही मेरा कोई सैनिक जीवित बेंगलोर पहुंचा हो। इस तरह वह पझसी राजा के आव्हान पर अनोखा आदिवासी विद्रोह था।'

त्रिपुरावासी ययाति के वंशज :- त्रिपुरा राज्य की प्रमुख जनजाति अपने आप को राजा ययाति के पुत्र द्रुह्यु का वंशज मानती है। द्रुह्यु ने पिता ययाति से वृद्धत्व ग्रहण करके यहाँ राज्य स्थापित किया था। उनके वंशज वतर्दन सागर द्वीप से कछार गये। बाद में ब्रम्हपुत्र नदी की समृद्ध उपत्यका में उन्होंने अपना राज्य स्थापित किया। उनकी राजधानी में कपिल मुनि का आश्रम रहा था। इस तरह त्रिपुरा राज्य प्राचीन नरेश ययाति के वंशजों द्वारा स्थापित किया गया था। यहाँ की आज की जनजाति भी उन्हीं की वंश परंपरा से है।

अध्याय-11

असम के स्वतंत्रता सेनानी क्रांतिवीर-तीरथ सिंह

असम में खासी की पर्वत श्रृंखलाओं में खासी आदिवासी रहते हैं। इन खासी पर्वत मालाओं में लगभग 30 रियासतें थीं जो आदिवासी प्रमुखों के नेतृत्व में गणतंत्र की तरह संचालित होती थी। इनके बीच में सामन्जस्य रहता था। मुखिया मंडल में सभी आपस में सलाह करके नीतियाँ तय करते थे। सबसे पहले सन् 1818 के लगभग डेविड स्काट जो तत्कालीन गवर्नर जनरल का एजेंट था, के द्वारा लोअर असम पर कब्जा कर लिया गया। उसने खासी की पहाड़ियों के बीच सड़क बनाने की योजना बनाई। जिसका कई मुखियाओं ने विरोध किया पर कुछ की सहमति से सड़क बन गई और कंपनी की पहुँच

इन पहाड़ियों तथा वहाँ की रियासतों तक हो गई। फिर क्या था डेविड स्काट ने सभी रियासतों पर कर रोपित कर दिया। वहाँ के मुखियाओं का चयन भी कंपनी की सहमति से होने लगा। खासी क्षेत्र में बनी सड़क के बीच चेरी के मुखिया दीवान सिंह तथा नुंगकला के क्षत्रसिंह की रियासत थी। सन् 1826 में जब छत्र सिंह की मौत हुई तब तीरथ सिंह को नुंगकला का प्रमुख बनाया गया। तीरथ सिंह आजाद खयालों के खासी थे। उन्हें लगने लगा कि उनके लोगों को व्यर्थ में अंग्रेजों को कर देना पड़ रहा था जिस पर उनका हक ही नहीं था। तभी एक प्रसंग आ गया रानी रियासत के राजा बलराम सिंह से तीरथ सिंह की ठन गई। तीरथ सिंह ने अंग्रेजों से सहायता मांगी। परंतु उन्हें सहायता नहीं मिली। अंग्रेजों ने बलराम सिंह की मदद की। अब तीरथ सिंह ने तय कर लिया कि बाहरी अंग्रेजों को खासी की पर्वतमाला में भगाकर ही दम लेंगे। 4 अप्रैल 1829 को तीरथ सिंह ने निलियम के मुखिया के साथ ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना पर हमला कर दिया। उन्होंने तहसीलदार महीघर बरूआ सहित नुंगकला के सभी ब्रिटिश कर्मचारियों को कैद कर लिया। क्रांतिकारी सेना ने केप्टेन वीडिंग फील्ड तथा बर्लटन को मौते के घाट उतार दिया। सरकारी बंगलों में आगलगादी। सभी कैदियों को मुक्त कर दिया। मुक्त किये कैदी एवं खासी की पहाड़ियों के हजारों आदिवासी खबर पाकर तीरथ सिंह के साथ हो गये। विप्लव की खबर पाकर मैदानी क्षेत्रों के निवासियों ने भी अंग्रेजों को टैक्स देना बंद कर दिया। वे सब भी तीरथ सिंह के साथ मिल गये। इसी बीच गारो की पहाड़ियों के आदिवासियों का भी गोरों को बाहर निकालने के लिए आने का समाचार फैल गया। अब अंग्रेजों ने केप्टन लिस्टर के नेतृत्व में सेना का एक दल सिलहट भेजा। पर तीरथ सिंह गिरफ्त में नहीं आए। उन पर एक हजार रुपए का पुरस्कार भी घोषित किया गया। वहीं तीरथ सिंह ने अपने ताकतवर साथी वनमोर तथा मानसिंह के साथ एक पर्वत के ऊपर शक्ति संग्रहकर लिया था। ब्रिटिश शासन द्वारा गंभीर चेतावनी जारी करने के बाद भी क्रांतिकारी नेता एवं आदिवासी नहीं झुके। ब्रिटिश शासन ने और अधिक सेना के साथ केप्टन लिस्टर को नुंगकला में भेज दिया। कंपनी शासन ने राजा सिंह मानिक के द्वारा तीरथ सिंह को संदेश भिजवाया

कि यदि वे समर्पण करें तो उनका स्वतंत्र राज्य वापस कर दिया जाएगा। लड़ते-लड़ते थक चुके तीरथ सिंह ने विश्वास में आकर समर्पण कर दिया। पर दगाबाजी के लिए कुख्यात कंपनी शासन ने उन पर मुकदमे का नाटक कर उन्हें आजीवन कारावास पर ढाका जेल भेज दिया। जहाँ वीर क्रांतिकारी तीरथ सिंह ने सन् 1841 में प्राण त्याग दिये।

पांडवों की वंश परंपरा मणिपुर में :- पांचों पांडव ययाति पुत्र पुरू के वंशज हैं। धर्मराज युधिष्ठिर एवं द्रोपदी के कक्ष में प्रवेश के कारण हस्तिनापुर से निष्कासित अर्जुन पूर्वांचल में मणिपुर आये। यहाँ वहाँ के राजा की पुत्री चित्रांगदा से उनका विवाह हुआ। उनसे बम्रुवाहन महावीर उत्पन्न हुए। उनकी 96वें पीढ़ी के बाद अंतिम राजा ईरांग 1586ई. में हुए। तत्पश्चात वर्तमान राजवंश प्रारंभ हुआ। परन्तु वहाँ राजा बम्रु वाहन के वंशज आज भी पाये जाते हैं। इस तरह पूर्वांचल भारत के वासी महाभारत युग से संबंधित माने जाते हैं।

अध्याय-12

टंट्या मामा-क्रांतिकारी 19वीं सदी के राबिनहुड ऑफ इंडिया

सन् 1844 में निमाड़ जिले के बिर्दा गाँव में भील दम्पत्ति को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। चूँकि जन्म के समय शिशु अत्यंत दुबला था अतः सब उसे टंट्या कहने लगे। परंतु जैसे-जैसे वह शिशु बड़ा हुआ वह अत्यंत मजबूत तथा ताकतवर होता गया यद्यपि उसका शरीर छरहरा ही रहा। बचपन से ही पहाड़ों का वह बेटा पहाड़ों को लाँघने, वृक्षों पर चढ़ने तथा ऊँचाई से नीचे

छलांग लगाने एवं तैरने में निपुण होता गया। किशोरावस्था में ही उसके माता-पिता स्वर्गवासी हुए। वह अकेला ही अपनी थोड़ी सी जमीन में खेती करके, वनोपज एकत्रित कर उसे बाजार में बेचकर गुजारा करने लगा। अनियमित वर्षा के कारण वह अंग्रेज सरकार द्वारा नियुक्त जमींदार को भारी भरकम लगान न चुका सका। इस पर जुल्मों के लिए आदी जमींदार ने गरीब टंट्या की जमीन कुर्क करा ली। बहुत अनुनय विनय करने के बाद भी जमींदार नहीं पसीजा। उसने टंट्या को जमीन से बेदखल कर अपना कब्जा कर लिया। इस तरह अन्य आदिवासियों को भी अत्याचारी जमींदार ने बेदखल कर उनकी रोजी रोटी छीन ली। टंट्या ने जब जुल्म के खिलाफ आवाज उठाई तो उस पर चोरी का इल्जाम लगाकर उसे एक साल की जेल की सजा दिला दी गई। सन् 1857 की क्रांति को कुचलने के बाद ब्रिटिश क्राउन के शासन में अंग्रेजों का अत्याचार बहुत बढ़ गया था। भुक्त भोगी टंट्या भील उसके उदाहरण थे। परंतु अब टंट्या के मन में अत्याचार का प्रतिरोध करने की भावना जाग्रत हो चुकी थी। वे अब प्रकट रूप से अंग्रेजों एवं उनके पिट्ठुओं का विरोध करने लगे थे। सजा काटकर आने पर टंट्या मेहनत मजदूरी करके जीवन यापन करने लगे थे। साथ ही वनोपज बेचने आसपास के बाजारों में जाने लगे थे। उनके साथ उनके बचपन के साथियों में एक युवती भी थी जिससे उन्हें लगाव था। वो भी उन्हें पसंद करती थी। एक रात जब वे बाजार में माल बेचकर एक दुकान के शेड की छाया में सो रहे थे तब एक धनिक के पुत्र ने उनकी सहेली को अगवा कर लिया। सुबह सभी ने युवती को न पाकर उसकी खोजबीन की तो उसका शव उस धनिक पुत्र की हवेली के बाहर क्षत विक्षत स्थिति में पाया गया। उसके साथ बुरी तरह से बलात्कार किये जाने के चिन्ह साफ दिखाई दे रहे थे। टंट्या एवं साथियों ने मिलकर पुलिस से शिकायत की। पर धनिक पुत्र के पैसों ने पुलिस का मुँह बंदकर दिया था। इस पर भड़क कर टंट्या ने पुलिस वालों के साथ मारपीट शुरू कर दी। परिणाम स्वरूप उनकी बेरहमी से पिटाई की गई तथा चोरी के इल्जाम में तीन माह की जेल की सजा दिला दी गई।

अब टंट्या का माथा घूम गया। उन्होंने ब्रिटिश शासन एवं धनिक वर्ग

के प्रति शस्त्र उठाने का निश्चय कर लिया। उनके साथ उनके बचपन के साथी भी हो लिए। पहले 5 लोगों का दल बना। उसे पांडो सेना का नाम मिला। अब वे सब अपने खबरी विजनिया के गाँव में रहने लगे। टंट्या के मुख्य शत्रु पोखर गाँव के अंग्रेज परस्त थे। अत: विजनिया की खबरों के आधार पर वे पोखर के लोगों को पकड़कर उन्हें पीटने तथा उनसे फिरौती वसूलने लगे। टंट्या ने अब निमाड़ के घने जंगलों में रहना शुरू कर दिया। वहाँ विजनिया उन्हें खबरें लाकर देता था तब वे कार्यवाही को अंजाम देते थे। जब बात बढ़ गई तब पुलिस ने धोखे से टंट्या भील को बुलाया तथा वहाँ पर उन्हें तथा विजनिया, दिपिया आदि पाँचों को पकड़ लिया। उन सब को जेल की सजा दी गई। इस बार तो टंट्या एवं उनके साथियों ने समझ लिया कि अब यही उनका जीवन था, उन्हें इसी तथा कथित अपराध की राह पर चलना होगा। एक रात उन सबने सरों पर कंबल बाँध लिये। पहले सबसे नीचे टंट्या ने कमान संभाली। उसके उपर साथी चढ़ते गये तथा एक-एक करके छलांग मारकर 15 फुट की दीवार फांद कर बाहर निकलते रहे। अंत में टंट्या ने जोरदार छलांग लगाई तथा दीवार के ऊपर खड़े होकर जोर से चिल्लाया- 'सुनो जेल के साहबों, सरकार के लोगो मैं जा रहा हूँ, हिम्मत हो तो पकड़ लो क्योंकि फिर कभी टंट्या को तुम पकड़ नहीं पाओगे।' यह कहकर वे 15 फुट नीचे कूद गये तथा हवा की रफ्तार से जंगल में समा गये। पुलिस वालों ने कई दिनों तक जंगल का चप्पा-चप्पा छानकर टंट्या को पकड़ने की कोशिश की पर संभव न हुआ। टंट्या भील ने इस बार सुनियोजित ढ़ंग से काम किया। वन वन घूमकर भीलों को इकट्ठा किया। उनकी टुकड़िया बनाई। शस्त्रों का इंतजाम किया। सबसे पहले उन्होंने उनके खिलाफ झूठी गवाही देने वालों का सरे आम वध कर दिया। फिर सूदखोर साहूकारों को लूटना शुरू किया। उन्हें लूटकर उनके कागजात जलाकर वे गरीबों की जमीनों को ऋण मुक्त करके उन्हें वापस दिला देते थे। फिर यदि साहूकार गरीबों को सताने की कोशिश करते थे तो फिर उन्हें यमराज के लोक भेज दिया करते थे। उन्होंने अपनी टुकड़ियों को सख्त आदेश दे दिया था कि कभी भी किसी गरीब, बालक या स्त्री को तंग नहीं किया जाएगा। धनिकों को लूटकर भी वे उनकी बहू,

बेटियों, स्त्री या बच्चों को हानि नहीं पहुँचाते थे।

जैसे-जैसे टंट्या की शक्ति एवं वारदातें बढ़ती गई, वैसे-वैसे पुलिस के द्वारा उन्हें पकड़ने तथा दमन करने की योजना भी बनती गई। सन् 1880 में टंट्या के साथी विजनिया तथा दिपिया पकड़े गये। उन्हें जबलपुर जेल में रखा गया। पर दिपिया किसी तरह जेल से फरार हो गया तथा टंट्या से आ मिला। इधर विजनिया जो असाधारण ताकत का स्वामी था। उसकी दौड़ने की गति अत्यंत तेज थी। वह शेर की तरह दहाड़ता था उसे पुलिस ने कोर्ट में पेश कर मौत की सजा दिला दी तथा जबलपुर में ही आज जहाँ पी.एस.एम. है वहाँ पेड़ से लटका कर मरवा डाला। उसका सिर काफी बड़ा था। देह भी विशाल थी। उसका शव कई दिनों तक पेड़ से लटका रहा। उसी के कारण जबलपुर के लोग उसे टंट्या भील की देह समझने लगे थे पर ऐसा नहीं था।

टंट्या उस समय जीवित थे तथा विजनिया की मृत्यु से दुखी अवश्य हुए पर उन्होंने अपनी गतिविधियाँ और बढ़ा दीं। यहाँ तक कि ब्रिटिश प्रशासन घबरा गया। पुलिस वाले टंट्या को पकड़ने के बजाए नौकरी छोड़कर घर चले जाते थे। टंट्या ने अपने दल के खिलाफ मुखबिरी करने वालों को दर्दनाक मौत दी। लेकिन आदिवासी वर्ग उनका मित्र था। वे सदा उनकी हिफाजत करते थे। ब्रिटिश सरकार ने स्थानीय पुलिस एवं सेना की नाकामी देखकर इंग्लैंड से एक बड़े अधिकारी को उन्हें पकड़ने के लिया बुलाया। वह अधिकारी बंबई आया तथा वहाँ से रेल द्वारा इंदौर उतरा। इंदौर से उनका सामान लेकर कुली और टांगे वालों के रूप में टंट्या उसे बाहरी इलाके में ले गये। वहाँ उतरकर साफा अलग कर बोले- साहब मैं ही टंट्या हूँ। मुझे पकड़ने आये हो, लो अब पकड़ो मैं खड़ा हूँ। 'साहब घबरा गया। उसने तौबा की। टंट्या जंगल में चले गये। साहब भय से कांपता हुआ खुद तांगा चलाकर स्टेशन पहुँचा तथा वहाँ से ट्रेन द्वारा सीधा बंबई गया तथा जहाज के द्वारा इंग्लैंड चला गया। इधर टंट्या ने सैकड़ों, धनिकों अंग्रेज अफसरों को लूटा। अनेको को मार डाला। पर पकड़ में नहीं आए। उनका ठिकाना महू के पास भी था। लूट की रकम, जेवर आदि वे साल में एक बार साथियों में बाँटकर गरीब

कन्याओं का विवाह कराते थे। सैकड़ों कन्याओं का मामा बनकर उन्होंने उनका विवाह कराया था। इस तरह के सामूहिक विवाहों में भी सरकार उनकी उपस्थिति के बावजूद उन्हें पकड़ नहीं पाई। पर उनको पकड़ भी लिया गया तो उनकी धर्म बहिन के पति गणपत के षड़यंत्र तथा गद्दारी से, गणपत ने उनको अपनी पत्नि से राखी बंधवाने बुलाया था। राखी टीका के बाद भोजन करके घर में सोते टंट्या को सैकड़ों पुलिस वालों के द्वारा कैद करवा दिया। इस तरह बहन ने राखी बाँधी तो बहनोई ने हथकड़ी पहनवा दी। टंट्या को होल्कर पुलिस ने बंदी बनाया था। बाद में उन्हें मध्य प्रांत की पुलिस को सौंप दिया गया। उन पर मुकदमा चला। मुकदमें के दौरान हजारों भीलों एवं आदिवासियों ने उनकी रिहाई की अपील की। नागपुर में चीफ कमिश्नर के पास प्रार्थना पत्र भी दिया। नागपुर स्थित एडवोकेट काउंसिल ने भी उन्हें माफ करने के लिए चीफ कमिश्नर को पत्र लिखा। पर सब बेकार हो गया। अदालत ने उन्हें मृत्यु दंड की सजा सुनाई। चूँकि निमाड़ में या नागपुर में फांसी देने पर संघर्ष की संभावना थी। अतः गुप्त रूप से उन्हें जबलपुर भेज दिया गया। पर यह बात भीलों को मालूम पड़ गई। अनेक भील जबलपुर पहुँच गये। वहाँ पर स्थानीय आदिवासियों का भारी समूह एकत्रित हो गया। जबलपुर स्टेशन से जेल तक ले जाना कठिन हो गया। टंट्या एक बार इस जेल से पलायन कर चुके थे। अतः इस बार विशेष सतर्कता बरती गई। स्टेशन से जेल के रास्ते भर पुलिस और सेना का पहरा था। टंट्या को स्टेशन से पीछे के रास्ते से निकाला गया तथा सीधे जेल के रास्ते में मोटर खड़ी करके उन्हें बैठाकर जेल के अंदर भेज दिया गया। 22 अप्रैल 1889 को सुबह के पहले ही उन्हें फांसी दे दी गई। गुप्त रूप से उनका अंतिम संस्कार किया गया। परंतु आदिवासियों ने उस स्थल को खोज निकाला तथा उनकी अस्थियों को माँ नर्मदा में विसर्जित कर दिया। इस तरह गरीबों के मसीहा अंग्रेज सरकार के शत्रु क्रांति वीर टंट्या भील पंचतत्वों में विलीन होकर परमात्मा के पास चले गये।

विशेष :- टंट्या मामा की धाराखेड़ी के राजा तखत सिंह सहायता किया करते थे। वे उन्हें मालिक कहते थे। अंतिम समय में टंट्या की इच्छा थी

कि उनका ताबीज एवं अष्टधातु के कड़े मालिक को दे दिये जाएँ। तद्नुसार तखत सिंह को वे कड़े और ताबीज दे दिये गये। अंग्रेजों से बचने टंट्या मामा राजा तखत सिंह की हवेली में रुकते थे। उस समय राजा की रियासत में 30 गाँव थे। राजा तखत सिंह की चौथी पीढ़ी के वंशज ठाकुर शिवचरण सिंह ने बताया कि कड़े और ताबीज हवेली में रखे थे। पर उन्होंने वे कड़े तथा अन्य सामान तीन साल पहले नर्मदा जी में विसर्जित कर दिये थे।

विलक्षण बलिदान :- ईसा पूर्व 327 में सिकंदर हिन्दू कुश पर्वत को पारकर को ही दामन की घाटी में आया। वहाँ से पर्डिकस के साथ सैन्यबल लेकर सिंधु नदी की ओर चला। वहाँ कुन्नूर घाटी में आदिकाल से बसी अनाम जनजाति के वीरों ने उस यूनानी सेना का सामना किया। सिकंदर के दानवी बल ने उस जनजाति को कुचल जरूर दिया। परन्तु उन वीरों ने दानवी शक्ति के आगे न झुकने की परंपरा तो स्थापित कर ही दी।

अध्याय-13

शिव भक्त क्रांतिकारी शंभुधन फूंगलो

सन् 1850 की फाल्गुन पूर्णिमा के दिन देप्रेन्दाओं फूंगलो तथा उनकी पत्नी के घर एक पुत्र रत्न ने जन्म लिया। वह शिशु अत्यंत बलिष्ठ तथा सुशोमन था। उसका नाम शंभुधन रखा गया। असम प्रदेश के उत्तर कछार जिले के छोटे ग्राम लेकर में उस समय फूंगलो परिवार में रहता था। गरीबी में जी रहे

वे लोग यायावर जीवन व्यतीत करते थे। बचपन से ही शंभुधन की भक्ति महादेव में थी। वे महादेव को ही सृष्टि का सृजनकर्ता मानते थे। शिव पूजा उनके नित्य प्रति जीवन का अंग बन गई थी। एक बार वे शिव पूजन के लिए पहाड़ पर गये। वहाँ से काफी देर तक जब नहीं लौटे तब गाँव वाले उन्हें खोजने निकले। उनके साथ उनका छोटा भाई हाइशोलांग भी था। काफी दूर उन्होंने पाया कि ग्राम ग्रागोंग में दियूंग नदी के किनारे एक शिला पर शंभुधन ध्यानस्थ बैठे थे। काफी देर पुकारने पर भी जब उनका ध्यान नहीं टूटा तब भाई ने उन्हें पकड़कर जोर जोर से हिलाया। अब उन्होंने आँखे खोलीं। सामने भाई और ग्रामवासियों को पाकर कहा- 'आप सब चिंतित न हों। मैं परमात्मा शिव का ध्यान कर रहा हूँ। तथा उनके दर्शन तथा उनसे शक्ति पाकर ही आऊँगा। आप चले जाएँ-' इस तरह वे पुनः ध्यानस्थ हो गये। उनके अनुसार उन्हें शिव दर्शन हो गये थे। तबसे उन्हें सिद्ध शिवयोगी माना जाने लगा। दूर-दूर से लोग उनके पास चिकित्सा तथा समस्या का समाधान के लिए आने लगे। वे सबकी समस्याओं का समाधान करते थे तथा जड़ी बूटियाँ एकत्रित कर औषधियाँ बनाकर रोगों का उपचार भी करते थे। इसी बीच उनका विवाह नासादी नामक सुशील कन्या से हो गया। शंभुधन डिमासा जाति के थे। उस समय धानशी वैली से कपीली तथा दवांग वैली तक डिमासा राज्य था। उसकी राजधानी डीमापुर थी। सन् 1832 तक आहोम हमले से और ईस्ट इंडिया कंपनी के कुचक्र से डिमासा राज्य समाप्त हो गया था। अंग्रेजों ने उस क्षेत्र को विभाजित कर नगाँव एवं नागा हिल्स दो जिलों को बनाया था। दयांग एवं कपीली को नगाँव में तथा उत्तर कछार को नागा हिल्स से मिला दिया।

अंग्रेजों की इस 'फूट डालो राज करो' नीति का विरोध होने लगा। शंभुधन ने उस विरोध का नेतृत्व स्वीकार किया। उन्होंने क्रांतिकारी दल का गठन किया। वे स्वयं उसके कमांडर बने तथा मानसिंह को प्रथम सलाहकार तथा मोलागयांग को उप कमांडर बनाया। उन्होंने माइवांग में क्रांतिकारी दल को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की। शंभुधन का समर्थन सारे क्षेत्र में होने लगा बड़ी संख्या में युवा एवं प्रौढ़ उनके क्रांतिकारी दल में शामिल हो गये। इस विप्लवकारी व्यवस्था की खबर उत्तर कछार के ब्रिटिश अधिकारी मेज बोयोडा तक पहुँची। उसका

सहायक सी. सोपीट था। क्रांतिकारी दल में लोग जगह-जगह सरकारी कार्यालयों पर हमले करने लगे। इससे ब्रिटिश सत्ता ने शंभुधन एवं उनके साथियों के नाम गिरफ्तारी वारंट निकाला पर जब एक पुलिस अधिकारी 6 पुलिस कर्मियों के साथ शंभुधन को पकड़ने माइवांग पहुँचा तो वहाँ शंभुधन की बलिष्ठ काया तथा अनुयायियों के समूह से आतंकित होकर उलटे पाँव वापस लौट गया। शंभुधन के सैनिकों के प्रशिक्षण के लिए हाटां राजाओं की शिववाड़ी, नारोसा नदी के तट पर स्थित भैखवाड़ी, कारकारी की कालीवाड़ी, बराकनदी तट पर स्थित सिद्धेश्वर शिव मंदिर, हाइलाकांदी का देवी मंदिर, सोनाई के पास स्थित शिव मंदिर और घोलाई की कालीबाड़ी में शिविर लगाये गये थे। इसके बाद शंभुधन ने दारमिखाल में भी प्रशिक्षण शिविर लगाया। उन्होंने लोहे का संग्रह कराया तथा बड़ी संख्या में शस्त्रों, तलवारों, घनुष वाणों, भाला आदि का निर्माण कराया। भुवन पर्वत पर एक गुफा को उन्होंने मुख्यालय बनाया तथा वहाँ शस्त्र एकत्रित किये। इस तरह मुख्यालय बनाकर शंभुधन डिमासा कछारी राज्य की अंतिम राजधानी खासपुर पहुँचे। वहाँ लोगों को संगठित कर क्रांतिकारी आंदोलन को आगे बढ़ाया। शंभुधन तथा उनकी पत्नी नासादी पास में इमालिंग गाँव में रहने लगे।

सारे क्षेत्र में हो रहे विप्लव तथा अंग्रेजों पर हमलों से ब्रिटिश शासन हिल गया। उसने शंभुधन को समाप्त करने की मुहिम छेड़ दी। एक दिन जब शंभुधन अपनी पत्नी के साथ इगालिंग ग्राम के अपने घर में भोजन कर रहे थे तब अचानक उनके घर को अंग्रेज सैनिकों ने घेर लिया। शंभुधन के पास शस्त्र नहीं थे। वे शस्त्र लेने के लिए बाहर अपने दूसरे घर की और दौड़े। पर एक सैनिक ने उनके पैर में तलवार मारी। उनका पैर कट गया। पर वे दूसरे पैर से ही दौड़ते रहे। परंतु अधिक दूर नहीं जा सके। रक्त स्राव के कारण अशक्त होकर गिर पड़े। गिरने पर भी उनके मुख से भारत माता की जय के नारे निकलते रहे।

12 फरवरी 1883 के दिन उन्होंने प्राण त्याग दिये। परंतु अन्य क्रांतिवीरों की तरह शंभुधन को भी स्वतंत्रता संग्राम के यौद्धाओं में स्थान नहीं मिल सका। जबकि प्राणोत्सर्ग करने वालों के बीच उनका त्याग अत्यंत महत्वपूर्ण था। देश को खंडित आजादी मात्र अहिंसा के नारों से नहीं मिली उसमें क्रांतिकारियों के रक्त समर्पण का योगदान भी है।

अध्याय-14

वीर आदिवासी कृष्णम् बन्धु

मुगल बादशाह के जमाने में भारत में व्यापार करने आई कई यूरोपियन कंपनियों में से ईस्ट इंडिया कंपनी व्यापार के साथ राज करने की दिशा में बढ़ चली थी। अनेक राज्यों पर कब्जा जमाने के बाद दक्षिण भारत के विशाल क्षेत्र पर भी उनकी सत्ता कायम हो गई थी। आंध्र प्रदेश पर भी उनका अधिकार हो चुका था। परन्तु विशाखापट्टम का एक छोटा सा भाग पालकोंडा अभी तक स्वतंत्र था। ईस्वी सन् 1800 के बाद भी वहाँ पर कुमार राजू का राज्य था। वह अपने छोटे से क्षेत्र में आदिवासियों के साथ सहयोग करते हुए सुशासन स्थापित किये हुए था। राज्य में सभी उसका आदर करते थे। वह स्वयं भी आदिवासी था। उसका राज्य भी साम्राज्यवादी अंग्रेजों की आँखों में खटक रहा था। एक दिन ईस्ट इंडिया कंपनी की फौज ने पालकोंडा पर हमला कर दिया। कुमार राजू ने बहादुरी के साथ युद्ध किया परन्तु अंत में अंग्रेजों ने उसे पकड़कर बंदी बना लिया। कुमार राजू की पत्नी रानी कृष्णम्मा ने अपने भाईयों जो कृष्णम् बंधु कहलाते थे। उन्हें सहायता के लिए बुलाया। वे तीनों भाई विशालकाय, बलिष्ठ तथा वीर योद्धा थे। उन्होंने अपने समर्थकों के साथ अंग्रेजों पर हमला कर दिया। अंग्रेज कलेक्टर के शिविर में आग लगा दी। अनेक अंग्रेज सैनिकों को मार गिराया। उन तीनों ने अपने बहनोई को कैद से मुक्त करा लिया। बाद में वे पहाड़ों पर रहते हुए अंग्रेजों के खिलाफ गुरिल्ला युद्ध करते रहे। उन्होंने सालों तक अंग्रेजों के बंगलों, शिविरों सैन्य ठिकानों पर हमला करते हुए लड़ाई जारी रखी। अंत में अंग्रेज सत्ता को पूरी ब्रिगेड भेजना पड़ी तब जाकर उन आदिवासी वीरों को पराजित किया जा सका था इस तरह मातृ भूमि की रक्षा करते हुए कुमार राजू तथा तीनों कृष्णम् बंधु तथा देवी कृष्णम्मा शहीद हो गये।

अध्याय-15

वीरवर आदिवासी योद्धा
भागो जी नाईक

भागोजी नाईक महाराष्ट्र के नासिक जिले के नांदूर सिंगोर गाँव के निवासी थे। 3 अप्रैल 1818 को नासिक जिले के अपकाई, ढपकाई किलों पर ईस्ट इंडिया कंपनी ने अधिकार कर लिया था। उसके बाद जुन्नर क्षेत्र के महादेव कोली आदिवासियों के सारे अधिकार छीन लिए गये थे। परिणाम स्वरूप भील एवं महादेव कोली आदिवासियों ने संघर्ष शुरू कर दिया। नासिक और नगर जिलों के आदिवासी नेताओं की अगुआई में महादेव कोली एवं

भीलों ने अंग्रेजों पर हमले शुरू कर दिये। उसी समय चालीस गाँव के भील भी संघर्ष में शामिल हो गये। इससे आतंकित अंग्रेज अधिकारियों ने नेताओं को जान से मारने या बंदी बनाने वालों को इनाम देने की घोषणाएँ भी कर दीं थी। इस संघर्ष का नेतृत्व भागोजी नाईक ने किया था। जिस घाट पर उन्होंने संघर्ष का बिगुल फूँका था उसे भागोजी नाईक घाट कहते हैं। उन्होंने संगमनेर, पारनेर एवं सिन्नर के अंग्रेजों के द्वारा नियुक्त मामलेदारों को आत्म समर्पण करने की चेतावनी दी। तत्पश्चात जब 1857 का स्वतंत्रता संग्राम देश में फैल गया तब भागोजी ने भी पुलिस अधीक्षक जे डब्ल्यु हेन्ड्री एवं उनके साथ आये सिपाहियों पर हमला करके पुलिस अधीक्षक एवं सिपाही को गोली मार दी। बाकी सिपाही भाग खड़े हुए। इसके बाद भीलों एवं महादेव कोली आदिवासियों का उत्साह बढ़ा। 18 अक्टूबर 1857 को ब्रिटिश पुलिस एवं भागोजी के आदिवासियों के बीच फिर भयानक संग्राम हुआ। इसमें कर्नल कैथक, ले. ग्राहम मेजर चेयमन आदि अधिकारी मारे गये। इसके बाद महादेव कोली और 200 भीलों ने त्र्यम्बकेश्वर में अंग्रेजों का खजाना लूट लिया। इससे क्रोधित होकर केप्टन नेताल ने 150 सैनिकों एवं 50 घुड़सवारों के साथ हमला कर पहाड़ी क्षेत्र के अनेक ठाकुरों एवं महादेवी कोली आदिवासियों को फांसी पर लटका दिया था। 12 नवम्बर 1857 को महादेव कोली आदिवासियों ने हरसूत का खजाना लूटकर कागजात जला दिये। इसके बाद 14 नवम्बर 1857 को क्रांतिकारी धरमपुर पहुँच गये। उसी समय केप्टन ग्लासपूल पेठ महाल पहुँचा।

उसने मासूम निरपराध आदिवासियों को पीटना एवं पकड़ना शुरू कर दिया। इस पर महादेव कोली तथा कोकण के आदिवासी वहाँ पहुँचकर केप्टन से युद्ध करने लगे। इसके बाद अंग्रेजों ने पेठ महाल के आदिवासी राजा भगवतराव को फांसी पर लटका दिया। इस पर पाँच सौ से अधिक आदिवासी क्रांतिकारियों ने भागो जी नाइक के भाई की अगुआई में केप्टन नेताल पर हमला किया। गोली चालन में नेताल मुश्किल से बचा पर उसका घोड़ा मारा गया। इन युद्ध में भागोजी के भाई महीपत की भी मृत्यु हो गई। इसके बाद भागोजी को पकड़ने के लिए मेजर फ्रासावर को नियुक्त किया गया। लगातार

के युद्धों के बाद भागोजी नाईक सिन्नर की माठ साखर पर्वत माला में विश्राम कर रहे थे। मेजर फ्रासावर भारी सैन्यबल के साथ वहाँ जा पहुँचा तथा उस स्थान को चारों तरफ से घेर लिया। भागोजी को आत्म समर्पण करने का आदेश मेजर ने जारी किया पर वे और उनके साथी बन्दूकें उठाकर गोली चलाने लगे। बड़ी देर तक लड़ाई चलती रही। जब भागोजी सहित 60 क्रांतिकारियों की गोलिया खत्म हो गई तब उन्होंने बंदूकों का लाठी की तरह प्रयोग करते हुए संघर्ष किया। पर अंत में भागोजी एवं 45 क्रांतिकारी शहीद हो गये। 15 आदिवासी योद्धा घायल हो गये।

इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा क्योंकि क्रांतिकारी भागोजी की मदद के लिए निजाम के देशी सैनिक चल पड़े थे पर उनके पहुँचने के पहले भागोजी नाईक शहीद हो गये। अंग्रेजों ने भागो जी के पूरे परिवार को मार डाला। भागोजी नाइक की समाधि नांदुर सिंगाटे से एक कि.मी. दूर आज भी उनके देश के लिए किये गये संघर्ष और बलिदान की कहानी कह रही है।

जनजाति गौरव :- सिकंदर के विशाल बल के आगे पश्चिमी जनजातियों ने कभी समर्पण नहीं किया। मत्सग जनजाति ने चार दिनों तक उसे रोका उदग्राम के आदिवासियों ने भी सिकंदर का सामना करते हुए अपने प्राणों की बलि दी। सिकंदर के राज्य की स्थापना तथा गवर्नर निकेनार की नियुक्ति के बाद भी अस्सकेजोईवासी आदिवासियों ने विद्रोह किया तथा गवर्नर को मार गिराया।

अध्याय-16

संथाल क्रांतिकारी : तिलका माँझी

बिहार के पहाड़ी इलाकों में बड़ी संख्या में संथाल आदिवासी रहते है। अठारहवीं सदी के संथाल विद्रोह ने अंग्रेज सरकार को हिला डाला था। सन् 1757 में बंगाल के बादशाह सिराजुद्दौला की हार के बाद मीरजाफर को नवाब बनाया गया। मीरजाफर वास्तव में ईस्ट इंडिया कंपनी का गुलाम था। अतः समूचे क्षेत्र में कंपनी का राज्य हो गया। राज्य के साथ जुल्मोसितम का कहर भी आँधी की तरह समूचे बिहार और बंगाल को पीड़ा पहुँचाने लगा।

सन् 1757 के बाद संथाल परगना के सारे क्षेत्र में अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो गई थी। उनके जुल्मों से आदिवासी तथा सामान्य वर्ग की जनता त्राहि-त्राहि करने लगी थी। प्रसन्न केवल वे थे जो अंग्रेजों के खुशामदी टट्टू थे। तिलका मांझी के माता पिता का स्वर्गवास हो चुका था। अब वे उनके तीन भाई तथा पत्नी ही परिवार में थे। अंग्रेज अफसर मोर्गन ने छावनी के लिए उनकी बस्ती खाली करा ली। सारे लोग बेघर हो गये। उनकी शिकायत सुनने वाला कोई नहीं था। इस पर तिलका मांझी ने संथालों की सभा बुलाई तथा गोरों को देश से बाहर निकालने का संकल्प लिया। उन्होंने सन् 1781 से 31 साल की आयु में बनैयारी जोर से आदिवासी विद्रोह शुरू किया। उनकी आवाज समूचे संथाल परगना में फैल गई।

संथाल परगना बनने के पहले वहाँ पहाड़िया आदिवासी जाति का राज्य था। उनका अपना कानून था। वे सभी बहादुर थे तथा अपनी धरती के लिए मर मिटने को तैयार रहते थे। बाद में ब्रिटिश शासन होने पर अंग्रेज संथालों और पहाड़ियों को लड़ाने का षड़यंत्र करने लगे। उनके षड़यंत्र से परिचित हुए संथालों एवं पहाड़ियों ने कंपनी के खिलाफ विप्लव का निर्णय कर लिया था। पर उन्हें नेता की तलाश थी। तभी 11 फरवरी 1750 को सुल्तानगंज थाना के अंतर्गत तिलकपुर गाँव में एक संथाल परिवार में जन्में तिलका माँझी का नेतृत्व उन्हें मिल गया। तिलका माँझी कुशाग्र बुद्धि के थे। उनके पास पवित्र आध्यात्मिक शक्ति थी जो संभवत: उन्हें जन्म से ही ठाकुर (ईश्वर) प्रदत्त थी। वे सभी के प्रति समान भाव रखते थे। धीरे-धीरे उनका प्रभाव चारों ओर व्याप्त हो गया। लोगों में विश्वास जम गया कि तिलका माँझी जो कह देंगे वह हो जाता है। जवानी में ही उनका जीवन सात्विक था। उनके नेतृत्व में हिन्दू मुसलमान सभी संगठन में शामिल हो गये थे। तिलका माँझी गुप्त रूप से मारगो दर्रे, तेलियागढ़ी दर्रे और कहल गाँव में गंगा के तट पर अंग्रेजी खजाना लूट लिया करते थे तथा गरीबों में बांट देते थे। तिलका माँझी के नेतृत्व में गंगा एवं ब्राम्ही नदियों के बीच मुंगेर, भागलपुर एवं संथाल परगना के इलाकों में अंग्रेजों से कई युद्ध हुए। गंगा एवं ब्राह्मी नदियों के बीच अंग्रेजी सेना एवं संथालों की फौज का मुकाबला कई बार हुआ। उनमें आदिवासियों

की विजय हुई। 1784 में तिलका माँझी ने भागलपुर पर हमला कर दिया। उन्होंने एक ताड़ के वृक्ष पर चढ़कर क्लीवलेंड की छाती को तीरों से बेध दिया। क्लीवलेंड मारा गया। इसे आदिवासियों ने अपनी जीत समझकर जश्न मनाना शुरू कर दिया। पर वे गलत फहमी में थे। अंग्रेज सेनापती आयरकूट ने भारी फौज के साथ रात में उन पर हमला कर दिया। हमले में तिलका माँझी के कई लोग मारे गये पर वे पकड़ के बाहर रहे। वे पहाड़ों पर रहकर गुरिल्ला युद्ध करते रहे। पर कंपनी सेना ने दबाव बढ़ा दिया पहाड़ों की घेराबंदी कर दी गई। विवश में आमने सामने की लड़ाई हुई। लड़ाई के दौरान धोखे से तिलका माँझी को पकड़ लिया गया। फिर तो बर्बरता की हद हो गई। उन्हें चार घोड़ों से बाँधकर भागलपुर की सड़कों पर घसीटा गया। बाद में फांसी पर लटकाया गया। उनकी छाती में कीलें ठोक दी गई। इस तरह दुर्दान्त यातना सहते हुए वे शहीद हो गये। जिस चौराहे पर तिलका माँझी को फांसी दीगई उस चौराहे का नाम तिलका माँझी चौक है। इस तरह बहादुर तिलका माँझी ने धरती की स्वतंत्रता के लिए अपना बलिदान दिया।

वीर शिवाजी और महादेव कोली :- महादेव कोली जनजाति को वीर शिवाजी ने शिवनेरी के किले में कैद रहने की अवधि में पहचाना था। तब से उन्हें प्रोत्साहन मिला तथा वे मराठा साम्राज्य के अभिन्न अंग बन गये। इसके बाद सहयाद्रि की पर्वत मालाएं महादेव कोली जनजाति के वीरों से भर गई।

अध्याय-17

वीरांगना रानी दुर्गावती-गोंडवाना की स्वतंत्रता सेनानी

महारानी दुर्गावती चंदेल कन्या थीं। उनका विवाह गोंडवाना के राजा दलपति शाह से हुआ था। उनका अल्पवयस्क पुत्र वीरनारायण था। विवाह के लगभग 4 वर्ष बाद उनके पति का देहान्त हो गया था। उन्होंने पति के बाद पुत्र को राजगद्दी पर आसीन कराकर राजमाता के रूप में कुशलता से राज्य संचालन किया। उनके राज्य काल का समय 1549 से 1564 तक था। उन्होंने पति से प्राप्त 52 गढ़ों के राज्य को 54 गढ़ों तक विस्तृत किया। उन्होंने

मुसलमान शासकों को कई बार हराया। मांडू के सुलतान बाज बहादुर को कई बार धूल चटाई। गुजरात सिंध की सीमा के दुर्दान्त डाकुओं के मियाना समूह को समूल नष्ट कर मालवा को सुरक्षित किया था। वर्तमान छत्तीसगढ़ में आतंक का पर्याय बने सुरील डाकुओं को संपूर्ण दल सहित कारागार में बन्द कर दिया। उन्होंने शिक्षा के लिये दक्षिण भारत के मूंगी पट्टनम् से 750 शिक्षकों के दल को बुलाकर गोंडवाना में पुनः अनेक विद्यालयों की स्थापना कराई। उनके समय में सोने व चाँदी की मुद्राएँ चलतीं थी तथा हाथियों को कर के रूप में प्राप्त किया जाता था। रानी ने अपने राज्य में सिंहों का अकारण वध बन्द करा दिया था। क्योंकि सिंह गोंडों के देवता माने जाते हैं। रानी ने लांजी की रानी तिलकावदी के राज्य में डाकू मुरतिया के गिरोह को समाप्त कराया था। उन्होंने इटावा (बीना) के किले पर महमूद खां के द्वारा किये गये हमले की विफल कर अपने सीमांत दुर्ग की रक्षा की थी। मुगल बादशाह अकबर ने अपनी साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के कारण जब विशाल सेना के साथ आसफखाँ की गोंडवाना पर हमला करने भेजा तब उसने शर्त रखी थी कि राजी दुर्गावती आत्म समर्पण करें तथा मुगल साम्राज्य की आधीनता स्वीकार करें। पर देश भक्त स्वतंत्रता की देवी रानी ने गुलामी के बजाए युद्ध करना उचित समझा तथा आसफ खां की पचास हजार सेना और तोपों को मात्र छह हजार गोंड सेना के द्वारा तीन बार धूल चटाई। पर अंत में अपने नायक बदन सिंह की गद्दारी से बारहा बरेलाके पास बारहा ग्राम में हार की आशंका से अपनी कटार से स्वयं का प्राणांत कर गुलामी की जिल्लत से मुक्ति पाई। उनका नाम धरती की स्वतंत्रता के लिये मर मिटने वालों में सदा अग्रणी रहेगा।

अध्याय-18

वीरांगना बलिदानी गोंड रानी तिलकावती

ये लांजी बालाघाट की रानी थीं। इन्होंने भी आसफखान के साथ युद्ध में महारानी दुर्गावती के पक्ष में रहकर युद्ध किया था। युद्ध में गंभीर रूप से घायल होने तथा गिरफ्तार होने के पहले ही उन्होंने अपने जीवन का अंत कर दिया था। इनका पूरा विवरण पुस्तक 'लांजी गोंडवंश की बलिदानी वीरांगना रानी तिलकावती' में दिया गया है।

भोपाल की बलिदानी रानी कमलापती

ये भोपाल की रानी तथा गुन्नौरगढ़ के राजा निजामशाह की पत्नी थी। जन्म से ये ब्राम्हण कृपाराम शास्त्री की पुत्री थी। राजा निजाम शाह गोंडवाने के राजा महाराज शाह के पुत्र थे। रानी ने इस्लाम नगर (प्राचीन जगदीशपुर) के नवाब दोस्त मोहम्मद के द्वारा उनकी अनुपस्थिति में छल से हथियाये गये गुन्नौरगढ़ एवं भोपाल के राज्य की प्राप्ति के लिए अफगान सेना से युद्ध किया था तथा स्वतंत्रता युद्ध में अपने जीवन का बलिदान दिया था। इसका आद्योपंत विवरण-पुस्तक भोपाल की वीरांगना रानी कमलापती में दिया गया है।

गोंडवाना के बलिदानी वीर नारायण

वीरवर वीर नारायण गोंड-ये गोंडवाना के राजा थे तथा राजा दलपत शाह एवं रानी दुर्गावती के पुत्र थे। इन्होंने भी चौरागढ़ में (करेली नरसिंहपुर) में आसफ खान से युद्ध में वीरगति प्राप्त की थी।

अध्याय-19

आदिवासी क्रांतिकारी लक्ष्मण नायक

उड़ीसा के बोइजाड़ी गुडा थानान्तर्गत तेंतुलीगुम्मा गाँव है। यहाँ भुमिया आदिवासी जनजाति के लोग बहुलता से रहते थे। इस गाँव के मुखिया पादलम् नायक थे। पिता के अवसान के बाद उनके पुत्र लक्ष्मण नायक मुखिया बने। गाँव में उनका बहुत सम्मान था। उस समय द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारंभ हो चुका था। भारत में स्वतंत्रता आंदोलन जोरों से चल रहा था। लक्ष्मण नायक भी अपने गाँव एवं आसपास के भुमिया समाज को आंदोलन के लिये संगठित करने लगे।

परिणाम यह हुआ कि उड़ीसा में स्थान-स्थान पर सत्याग्रह एवं जुलूस के आयोजन होने लगे। सबके प्रेरणादायक लक्ष्मण नायक बन गये। उस पर

अंग्रेज सरकार ने उन्हें जेल भेज दिया। जेल से छूटकर वे फिर आजादी की लड़ाई में संलग्न हो गये। उन्होंने मैथली नामक स्थान पर आंदोलन की तैयारी कर विशाल जुलूस के साथ जयपुर (उड़ीसा) के लिए प्रस्थान किया। पुलिस ने भयानक लाठी चार्ज करके अनेक को घायल कर दिया। कुछ की मृत्यु भी हो गई। पुलिस लक्ष्मण नायक को बंदी बनाने की कोशिश में थी पर वे बचकर निकल गये। शीघ्र ही मैथिली लौटकर उन्होंने आदिवासियों को संगठित किया तथा थाने पर तिरंगा फहराने का प्रयास किया। परंतु पुलिस ने फिर बर्बरता के साथ लाठी चार्ज किया। जिससे अनेक घायल हुए तथा मारे भी गए। लक्ष्मण नायक को भी चोट लगी वे बेसुध हो गये।

संयोगवश लक्ष्मण नायक फिर तैंतुली गुम्मा लौट गये तथा फिर संघर्ष की तैयारी करने लगे। पर पुलिस ने इस बार उन पर रमैया नामक व्यक्ति की हत्या का झूठा आरोप लगाकर उन्हें तथा उनके परिवार को बंदी बना लिया। फिर मुकदमें का नाटक हुआ और 29 मार्च 1943 को क्रांतिवीर लक्ष्मण नायक को बरहामपुर जेल में फांसी देकर शहीद कर दिया गया। श्री लक्ष्मण नायक और इन सरीखे असंख्य हुतात्मा क्रांतिवीरों का बलिदान किसी भी अन्य स्वतंत्रता सेनानी से अधिक ही कहा जाएगा।

जनी शिकार :- रांची में रोहतासगढ़ की रक्षा के लिए मुगलों से उरांव योद्धाओं के युद्ध में महिलाओं ने भी तीन प्रमुख युद्ध लड़े थे। इन महिला वीरों ने पुरुष वेश में युद्ध में भाग लिया था। उनकी तीन वीरोचित लड़ाईयों की स्मृति स्वरूप महिलाएँ ललाट एवं कनपटी पर तीन रेखाओं वाला गोदना गुदवाती हैं तथा आज भी पुरुष वेश में तीर कमान ढोल-ढमाकों के साथ जंगल में जनी शिकार उत्सव मनाती है।

अध्याय-20

ब्रिटिश काल के मध्यप्रांत एवं बरार के शहीद स्वतंत्रता सेनानी

नागपुर- श्री गनपत जयराम, श्री शंकर बालकृष्ण वांगड़े, श्री शाह उस्मान याकूब मियां, श्री कल्लू नायक, श्री अर्जुन देवीदीन परदेशी, श्री पंजाब राव आनंदराव वाडर, श्री अमरिया दरजी, श्री शंकर राव वाजीवा म्हाली, श्री ज्ञान राव सातुकर, श्री चिंतामन फरकड़े, श्री शिवराज उकंड राव कोंढाली, श्री लहाजू कलमेश्वर।

वर्धा- श्री केशव अप्पा कोगिरवार खरंगाना आरवी, श्री गंगाराम नागपुरे खड़की, श्री उत्तम राव मोहन जी अंबेडकर, श्री अंबादास लक्ष्मण दास राठी, श्री बाबूराम बकाराम गावले, श्री गुंडाराम जी, श्री लक्ष्मण रामचंद्र गोठाने, श्री फतेह खान यासीन खां, एक और नाम उपलब्ध नहीं।

चांदा- श्री बालाजी रंगोबा बरई चिमूर, श्री बाबूलाल पंचम सिंह, चिमूर, श्री दलीप सिंह क्षत्रिय चिमूर, श्री पुन्न नारायण राव बरई चिमूर, श्री रामजी कोष्टी चिमूर, श्री कुमार राय पुरकर चिमूर।

भंडारा- श्रीराम राम जी तेली तुमसर, श्री भदूराम कुनबी तुमसर, श्री हरिफागू सुनार, श्री बाबूराम परसराम कलार, श्री काली चरन माता प्रसाद अग्रवाल, श्री शंकरलाल मिश्र तिरोरा, श्री पांडु दोदवा कोष्टी, श्री काशी नाथ दरजी, श्री बड़कू तेली, श्री रामचन्द्र जनकू, श्री हीरालाल संपतलाल, श्री गनपत राव चुटके, श्री काशीनाथ जगन्नाथ तेली मोहाली।

जबलपुर- श्री गुलाब सिंह लक्ष्मण सिंह, श्री गुलाब सिंह गोरखपुर, श्री नंदबिहारी मथुरा प्रसाद पांडे कुरूगाँव, गुलजारी लाल कुंजीलाल सुनार कटनी, श्री जानकी प्रसाद पिपरिया कलाँ कटनी, श्री स्वराज प्रसाद वर्मा, श्री पुरुर्षातम दास बैरागी, श्री भवानी प्रसाद मुलाई राम घीवर मझगवां, श्री मन्नालाल कोदूलाल बानी कटनी, श्री लक्खू गोंड विजय ग्राम, श्री टाटरू गोंड भैंसदेही।

छिंदवाड़ा- शहीद प्रदुले बाईतुरिया, शहीद देमो बाई तुरिया, श्री बिरजू भोई तुरिया, शहीद रेनोबाई तुरिया, श्री नाथू लक्ष्मण गोसाई सौंसर, श्री अब्दुल

रहमान छिंदवाड़ा, श्री राजाराम शुक्ल छिंदवाड़ा, श्री स्वामी श्यामानंद अमरवाड़ा, श्री बादल भोई, श्री वामन राव पटेल बानोड़ा।

होशंगाबाद- श्री मंसाराम कसेरा, श्री प्रेमचंद्र कसेरा, श्री सुखलाल कसेरा, सभी चीचली, श्री इंद्रजीत गुसाई रामपुर, श्री रुद्रप्रताप सिंह मानेगांव, श्री ओंकार सिंह बलदेव सिंह बुंदेला बानेहारी, श्री देवी प्रसाद पचौरी बोहानी गौरा देवी चीचली।

निमाड़- श्री एस.एन. आगरकर खण्डवा।

बिलासपुर- श्री दसाराम फुलमाली वारासिवनी, श्री कृष्णचंद्र वर्मा बिलासपुर, श्री अजबलाल भंडारी लोधी मोहगाँव, श्री मोहरू गोवारा लालबर्रा (कारली)।

दुर्ग- श्री रामदीन गोंड डोंगर गांव, श्री ठाकुर रामनरेश कुमार, श्री परमानंद कुरमी अखरा, श्री जीवनलाल ब्राह्मण सिरसा, श्री रामप्रसाद देशमुख।

सागर- श्री साबूलाल सुखलाल जैन गढ़ाकोटा, श्री शालिगराम तिवारी, श्री प्रेमचंद्र बालचंद्र सिंघई सेमरा बुजुर्ग, श्री भैयालाल चौधरी।

रायपुर- श्री मंगलू लामाकेनी, शहीद रूक्मिणी ईश्शी बहारा, श्री रामदीन मिस्त्री भाटापारा, शहीद रूपा लवण, श्री विशाल राम सीतापार, शहीद भगवती बांसोती, शहीद बासुक्वारी बाई, श्री मान सिंह गोंड नागरी, श्री पंडली तेली सांकोरे, श्री बिराज महार बेलोर, श्री लक्ष्मण शिवचरण पिल्ले महासमुंद, श्री रतन जी बोरिया गोहर, श्री बोधन गोंड आमोली दीह, श्री रामचंद्र पारूल लोहारडीह, श्री जमना लाल चौपड़ा रायपुर, श्री रामदास विद्यार्थी रायपुर, शहीद रूक्मिणी बाई रायपुर।

बैतूल- श्री बिरसा गोंड बेहारी घोड़ाडोंगरी, श्री केला किरार नाहिया, श्री महादेव गोत्या तेली प्रभातपट्टन, श्री उदय किरार नाहिया, श्री कोमा सिंह गोंड बंजारी पाल, श्री मकडू गोंड जामवाड़ा, श्री रान गोंड बारंगवाड़ी, श्री मुंशी गोंड बेहाड़ी, श्री जिर्रा गोंड सालीधाना, श्री गोलमन सेठ चिचौली, श्री पन्ना सिंह गोंड महेन्द्र वाड़ी, श्री मनोहर पौलीकर मुलताई।

अमरावती- श्री वामनराव पाटिल इत्तमगांव, श्री महादेव आत्माराम फांडसे, श्री महादेव जागोबा बाघमारे, श्री रामराव लक्ष्मण गोहद, श्री शेषराव नाथू जी मुधोलकर सभी इत्तमगांव, श्री तुकाराम रोदबा इत्तमगांव, श्री पांडुरंग लक्ष्मण मालये लोनी, श्री महादेव भगवानजी बारमासे केनोदा, श्री विनागरू राव दौलत राव आवले बेनोदा, श्री केशव राव नाथोड़े बेलोरा, डॉ. गोविन्द राव मालये आष्टी,

श्री उदयभान कुकड़े, श्री केशव राव ढोंगे, श्री गुलाब राव घुड़े पाटील सभी वाडला, श्री पंछी ढोंगे वाडला, श्री गुलाब राव घुड़े वाडला, श्री बकाराम पाटिल वाडला, श्री महादेव श्रवण देशमुख आष्टी, श्री बाकाराम बिठूजी आष्टी, श्री मारोती गुरब आष्टी, श्री पन्नू कानेर आष्टी।

अकोला- श्री लक्ष्मण मीका जी गोडबोले, श्री नारायण सदाशिव आकोट, श्री नारायण भगत वाडेगांव, श्री मोहनलाल मुन्नालाल श्रीवास्तव कमार गाँव।

बुलढाना- श्री सिद्धेश्वर गणेश गौरे वकील, श्री जगदेव राव पाटिल नांदुरा, श्री लक्ष्मण पचघोर शेगांव।

यवतमाल- श्री पालेकर उपरोक्त शहीदों की मृत्यु पुलिस की गोली से, जेल की यातनाओं से या जुलूस पर पुलिस के प्रहार से हुई थी।

भोपाल के विलीनीकरण आंदोलन के शहीद भोपाल के विलीनीकरण आंदोलन में नवाब हमीदुल्ला खां के आदेश पर बोरास में दुष्ट थानेदार जाफर ने तिरंगा ध्वजा रोहण करते हुए देश भक्तों पर गोली चला दी। गोली चालन में सर्वश्री छोटेलाल, मंगल सिंह, धनसिंह तथा विशाल सिंह शहीद हो गये। ये सभी 16 से 30 वर्ष के आयु वर्ग के युवक थे। इनके अलावा 40 से अधिक देश भक्त घायल हुए थे। भोपाल के विलीनीकरण आंदोलन का दमन करने वाले नवाब हमीदुल्ला ने खूनी कलम से यह इतिहास लिखा था।

वीरतलक्कर चंदु :- केरल के कुरुचिया आदिवासी वल्लियुरकण्ड की देवी माँ एवं मुनि कुमार मार (लव कुश) के भक्त थे। उनके बीच तलक्कर चंदु भीमकाय तथा अपार बल शाली जनजातीय योद्धा हुए। जब केरल के कुरूचियों ने अंग्रेजों से स्वतंत्रता हेतु युद्ध किया तब उनके नेता चन्दु ही थे। वे अकेले 100 सैनिकों से युद्ध करते थे। घने जंगलों से भरे वायनाड के क्षेत्र में वे एक छोर से दूसरे छोर तक कई दिनों तक दौड़ते चलते युद्ध करते रहते थे। जब अंग्रेजों ने आदिवासियों के दमन हेतु भारी सैन्य बल लड़ाई में उतार दिया तब वीरवर चंदु आगे बढ़कर युद्ध करते रहे। एक दिन ऐसा आया कि सौ से अधिक सेना से वे दिन भर युद्ध करते रहे जब उनकी शक्ति समाप्त हो गई तब अंग्रेजों ने उन्हें पकड़ कर फांसी पर लटका दिया। बाद में उनका बड़ा भारी मस्तक काट कर पेड़ पर टांग दिया। इस तरह वे शहीद हो गये।

अध्याय-21

ब्रिटिश खोनोमा युद्ध के बलिदानी नागा क्रांतिकारी

सन् 1857 के बाद 22 सालों तक ब्रिटिश शासन नागालेंड को जीत नहीं पाया था। क्योंकि वहाँ की दुर्गम पहाड़ियाँ एवं नागाओं का शक्तिशाली प्रतिरोध ब्रिटिश आर्मी को आगे बढ़ने के मार्ग में बाधक था। नागा भूमि के उत्तर पूर्व में खोनोमा नागा रहते थे। ये खोनोमा नागा भी अपने अन्य नागा साथियों के साथ शांतिपूर्वक रहते तथा व्यापार करते थे। उनका व्यापार पड़ौसी असम के बाजारों से भी चलता था। परंतु असम पर ब्रिटिश सेना के अधिकार एवं मणिपुर नरेश के साथ संधि के बाद अंग्रेजों ने नागा विजय की ओर ध्यान दिया। अंग्रेजों के लिए यह इसलिए भी आवश्यक था कि नागा असम पर यदाकदा हमले भी करते रहते थे। साथ ही मणिपुर जाने के लिए नागा पहाड़ों से रास्ता प्राप्त करना भी जरूरी था। इस हेतु ब्रिटिश सरकार ने सन् 1832 में नागा पहाड़ी क्षेत्रों के पुलामी तथा चेमुकेडिमा के रास्ते का सर्वेक्षण कराया। सन् 1845 में कुछ नागाओं ने असम के लंका नगर में तीन सैनिकों को मारकर उनकी बंदूकें छीन ली। इस पर ब्रिटिश अधिकारी वुड खोनोमा में जाकर बंदूकें तो वापस ले आया पर उन नागा योद्धाओं को नहीं ला सका जिन्होंने लंका पर हमला किया था। फलतः वुड ने समूचे गाँव को आग लगा दी। इसके बाद नागाओं ने भी हमले शुरू कर दिये। उन्होंने असम पर 19 बार हमले किये तथा 282 अधिकारियों को मार डाला। इम्फाल एवं कोहिमा के अंग्रेज अफसरों को खोनोमा नागाओं के द्वारा विप्लव की तैयारियाँ करने की सूचना मिली। पर वर्षा के कारण उन्हें तुरंत हमले को रोकना पड़ा। इस दौरान अंग्रेज अफसर दामन्ट 21 सैनिकों एवं 85 पुलिस वालों के साथ स्थिति का आंकलन

करने पहुँचा। पर नागाओं ने उन पर हमला कर दिया। उस युद्ध में 50 अंग्रेज सिपाही मारे गये। शेष को भागकर जान बचानी पड़ी। इससे उत्साहित होकर नागा रणवीर ने अपने साथियों के साथ कोहिमा की अंग्रेज छावनी पर हमला कर दिया। उन्होंने 12 दिनों तक छावनी को घेरे रखा। अंत में अंग्रेज इस शर्त पर छावनी नागाओं के हवाले करने तैयार हो गये कि उन्हें वे मुकेडिमा तक आने जाने का रास्ता दे दिया जाए। पर उसी समय सूचना मिली कर्नल जेंसटन 2000 सैनिकों के साथ इम्फाल से रवाना हो रहा था, इसलिए नागा घेरा छोड़कर वापस चले गये। पर अंग्रेजों ने नागाओं को परास्त करने की ठान ली थी। शिलांग से जनरल नेशन एक हजार राइफलों, दो मांउटेन बंदूकों तथा एक राकेट दस्ते के साथ से शुमा पहुँच गया। मेजर इवान्स भी दो सौ राइफलों के साथ डिब्रूगढ़ से चेमुकोडिमा पहुँच गया। अंग्रेज सेना ने खोनोमाओं के निकलने के रास्ते बंद कर दिये। 22 नवम्बर 1879 को हमला शुरू हुआ। भारी गोला बारी के बाद भी नागा परास्त नहीं हुए। दिन भर युद्ध होता रहा। युद्ध में 9 में से 4 ब्रिटिश अफसर मारे गये। नागा वह स्थान छोड़कर ऊपरी दुर्ग में चले गये। उस दुर्ग में मरहुमा व शेबोमा गाँव के उनके वीर साथी थे। अंग्रेजों ने उस दुर्ग पर भी घेरा डाला पर नागा योद्धा छुटपुट हमले करते रहे। एक दिन बालाघान के चाय बागानों में नागाओं ने मैंनेजर ब्लिथ एवं 15 कर्मियों को मार डाला। लगभग 5 माह चले युद्ध में 22 नवम्बर 1979 से मार्च 1880 तक पाँच सौ ब्रिटिश मारे गये। पर केवल 19 नागा शहीद हुए।

अंत में अंग्रेजों के घेरे से नागाओं का खाद्यान्न समाप्त हो गया। उनके यहाँ भुखमरी की नौबत आ गई। तब बुजुर्ग नागाओं ने पहले युवाओं को समझा बुझाकर 27 मार्च 1880 को बेजोमा में नागाओं एवं ब्रिटिश शासन के बीच संधि कराई। तद्नुसार नागा खोनोमाओं ने ब्रिटिश आधिपत्य स्वीकार किया। इस तरह खोनोमा नागाओं ने आजादी के लिए संघर्ष किया।

अध्याय-22

क्रांतिवीर खाज्या नायक, भीमानायक सीताराम कंवर रघुनाथ मंडलोई एवं अन्य

बड़वानी एवं आसपास के क्षेत्रों में जनजाति के निवासियों का बाहुल्य है। सन् 1856 में अंग्रेजों के अत्याचारों के विरुद्ध, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में खाज्या नायक नामक जनजातीय वीर ने विद्रोह प्रारंभ कर दिया तथा एक बड़ी सेना गठित की। सन् 1857 की क्रांति के शांत होने के बाद भी खाज्या नायक संघर्ष करते रहे तथा उन्होंने अंग्रेजों को चैन नहीं लेने दिया। पर आखिरकार धोखे से ब्रिटिश सेना ने इन्हें गिरफ्तार कर लिया तथा अक्टूबर 1880 को इन्हें फांसी दे दी गई। इस तरह ये शहीद हो गये।

क्रांति वीर भीमानायक- वीरवर भीमानायक ने 1857 की जन क्रांति में तत्कालीन बड़वानी राज्य के पंचमोहली क्षेत्र से राजस्थान तथा नागपुर तक भारी सेना एकत्रित कर भाग लिया था। ये महान क्रांतिकारी तात्याटोपे के संपर्क में लगातार रहे। 1857 की क्रांति का शमन होने के बाद भी ये सक्रिय रहे। अंत में 1867 में इन्हें गिरफ्तार कर पोर्ट ब्लेयर भेज दिया गया। जहाँ इन्होंने 1869 में जीवन की आखिरी सांस ली।

क्रांति वीर सीताराम कंवर- निमाड़ क्षेत्र के महावीर सीताराम कंवर 1857 की क्रांति में शामिल थे। उन्होंने सतपुड़ा पर्वतमाला के भीलों को संगठित करके कंपनी की शक्तिशाली सेना के साथ लंबे समय तक संघर्ष किया था। सन् 1858 में कंपनी की सेना ने इन्हें गिरफ्तार कर लिया। कैद में यातनाओं के दौरान ये शहीद हो गये।

क्रांतिकारी रघुनाथ सिंह मंडलोई- टांडा बरुड के निवासी रघुनाथ सिंह मंडलोई भिलाला भील जाति के प्रभावशाली नेता थे। उन्होंने 1857 में

बीजागढ़ किले से अंग्रेजों पर हमला बोल दिया साल भर युद्ध करने के बाद सन् 1858 में इन्हें बंदी बना लिया गया। उसी अवस्था में ये शहीद हो गये।

बस्तर के क्रांतिकारी गुंडाधुर :- बस्तर के राजा भैरम देव के निधन के बाद सन् 1908 में अंग्रेजों ने दीवान कलिंद सिंह को हटा कर अपने खास बैजनाथ पंडा को दीवान बनाया। बैजनाथ ने अग्रेजों की मंशा के अनुसार कड़े कानून बनाकर आदिवासियों को जंगल की संपदा से वंचित कर दिया। इस पर जनजाति में क्रोध व्याप्त हो गया। सन् 1910 में दशहरा पर्व पर माँझी दरबार में पूर्व दीवान कलिंद सिंह, रानी सुवर्ण कुमारी, पंडित बाला प्रसाद मूरत सिंह, बहादुर सिंह आदि के नेतृत्व में एक बलिष्ठ एवं बहादुर जनजातीय योद्धा गुंडाधुर को ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए नियुक्त किया गया। गुंडाधुर नेतानार ग्राम के निवासी परंजा घूरवा जाति के थे। उन्होंने सारे क्षेत्र में मिट्टी के ढेले एवं हल्दी की गांठे भेजकर संघर्ष के लिये संदेश भेजे। इस तरह गुंडाधुर ने वर्षों तक आदिवासी योद्धाओं के साथ ब्रिटिश शासन से संघर्ष किया। हजारों आदिवासियों ने अपने प्राणों का बलिदान दिया। पर इस महावीर गुडाधुर का अंत कहां कैसे क्या हुआ यह अज्ञात ही रहा।

अध्याय-23

शहीद सुरेन्द्र साय

संभलपुर राज्य के खिंडा में श्री सुरेन्द्र साय का जन्म राज परिवार में हुआ था। 23 जनवरी 1809 में जन्में राजकुमार सुरेन्द्र साय के मन में होश संभालते ही 18 साल की आयु में ब्रिटिश शासन के खिलाफ युद्ध करने की भावना जाग गई थी। उन्होंने जनजातीय वर्ग के अधिकारों के लिये आवाज बुलंद की। सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में उन्होंने संभलपुर से कालाहांडी और बिलासपुर तक के क्षेत्रों में जगह-जगह पर अंग्रेजों पर हमले करके भारी क्षति पहुँचाई। आखिरकार 1862 में उन्हें गिरफ्तार किया गया। उन्हें बुरहानपुर के किले में कैद में रखा गया। उसी के दौरान 1884 में उनकी मृत्यु हो गई।

शहीद गुड्डे बाई, रेनोबाई, बिरजू भोई- सिवनी जिले के टुरिया ग्राम में जंगल सत्याग्रह करते हुए 9 अक्टूबर 1930 को ब्रिटिश पुलिस के द्वारा किये गये गोलीकांड में ये तीनों शहीद हो गये।

मंशु ओझा- मंशु ओझा ब्रिटिश सरकार के खिलाफ क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल थे। नवम्बर 1942 में इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जेल की कठोर यातनाओं के कारण गंभीर रूप से घायल हुए श्री ओझा ने घोड़ाडोंगरी में 28 अगस्त 1981 को शरीर त्याग दिया।

महासिंह कोल- ये गाड़ाघाट (पाटन) के वीर आदिवासी योद्धा थे। इन्होंने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में गाड़ाघाट के महावीर ठा. गजराज सिंह दुबे एवं ठाकुर जवाहर सिंह दुबे जमींदार के साथ मिलकर अंग्रेजों से युद्ध किया था। उस युद्ध में अनेक महिलाओं ने काशी सागर तालाब में डूब कर जौहर के द्वारा आत्मोत्सर्ग किया था। ठा. जवाहर सिंह तो युद्ध में शहीद हुए थे पर महासिंह कोल एवं ठा. गजराज सिंह जीवन पर्यंत गुरिल्ला युद्ध करते हुए अंग्रेजों से लड़ते रहे। वे पता नहीं कब कहाँ गये। (पुस्तक बलिदानी माटी से साभार)

अध्याय-24

1842 बुंदेला क्रांति के वीर बलिदानी योद्धा

श्री हीरालाल चांदरी- ये मदनपुर के वीर राजा दिलहन शाह के सहयोगी थे। इन्होंने लल्ला गोंड एवं फूल सिंह गोंड के साथ राजा के द्वारा प्रारंभ युद्ध में भाग लिया था। ये तीनों केप्टन बोलेंड द्वारा गिरफ्तार किये गये। दिलराज सिंह गोंड भी बुंदेला विद्रोह के सेनानी थे। वे जीवन भर अंग्रेजों से युद्ध करते रहे। सन् 1856 में उनका देहावसान हुआ।

राव अमान सिंह गोंड- राव साहब चौराई ग्राम दमोह के निवासी थे। वे बुंदेला विप्लव के योद्धा थे।

शिवराज सिंह गोंड- जागीरदार शिवराज सिंह देवरी सागर के थे। वे जैतपुर के राजा पारीछत के साथ बुंदेला क्रांति में शामिल थे। उन्हें बाद में नागपुर से गिरफ्तार किया गया था।

रणजोर सिंह गोंड- ये भी बुंदेला विप्लव 1842 के सेनानी थे। इन पर 10 हजार रुपए का इनाम घोषित था। बाद में इन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया।

निहाल सिंह कोरकू- ये नेमावर के खेड़ा सिकंदरी के जागीरदार थे। ये सन् 1842 के बुंदेला विद्रोह के सेनानी थे।

सन् 1857 की क्रांति के जनजातीय योद्धा- मदनपुर नरसिंहपुर जिले में नर्मदा जी के उत्तर तट पर स्थित एक लघु ग्राम है। राजा दिलहन शाह वहाँ के जमींदार थे। सन् 1842 के बुंदेला विद्रोह में उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया था। सन् 1857 में भी वे क्रांति में शामिल रहे। उनकी गिरफ्तारी पर उस समय 2000 रुपए का पुरस्कार अंग्रेज सरकार ने घोषित किया था।

वे ईस्ट इंडिया कंपनी की विराट सेना का वीरता से सामना करते रहे। अंत में उन्हें पकड़ लिया गया तथा जागीर जब्त करके फांसी दे दी गई।

वीरवर गोंड राजा महीपाल सिंह- जबलपुर के निकट भुटगांव में राजा की जागीर का सदर मुकाम था। सन् 1857 की क्रांति में उन्होंने खुलकर ब्रिटिश सेना एवं शासन से युद्ध किया। शाहपुरा, राजगढ़ एवं सुहागपुर के क्रांतिकारियों के साथ मिलकर तथा रानी अवंती बाई की सहायता करते हुए इन्होंने लगातार ईस्ट इंडिया कंपनी की फौज का मुकाबला किया। वे लगातार संघर्षरत रहे। उनके अंत का विवरण ज्ञात नहीं हो सका।

सीहोर के बलिदानी सैनिक :- ब्रिटिश शासन में भोपाल के पास सेना की छावनी थी। उसका नाम सी-फोर था। कालान्तर में वह अपभ्रंश होकर सीहोर हो गया। सन् 1857 की क्रांति में यहां के भारतीय सैनिकों ने क्रांति में भाग लिया था। उन्होंने ब्रिटिश सेना से युद्धकर इस क्षेत्र को स्वतंत्र करा लिया था। बाद में ह्यू रोज के द्वारा भारी सैन्य बल यहाँ भेजा गया। युद्ध में साधन एवं संख्या बल की कमी से क्रांतिकारी हार गये। उनमें से कई शहीद हो गये तथा 356 को कैद कर लिया गया। 14 जनवरी 1958 को सभी युद्ध बंदी क्रांतिवीरों को एक मैदान में एकत्रित कर हजारों ब्रिटिश सैनिकों ने उन्हें मशीन गन की बौछार से शहीद कर दिया। यह नृशंस हत्याकांड जलियाँवाला बाग की पुनरावृत्ति कही जा सकती है। यहां शहीदों की स्मृति में स्मारक भी बनाया गया है। प्रतिवर्ष उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने बड़ी संख्या में लोग एकत्रित होते हैं।

अध्याय-25

स्वतंत्रता सेनानी गंगाधर गोंड एवं अन्य

जबलपुर जिले में मानगढ़ रियासत के राजा गंगाधर गोंड 1857 की क्रांति में पूरी तरह से शामिल रहे। उन्होंने वर्षों तक ब्रिटिश सेना से जगह-जगह युद्ध किया। उनकी जागीर जब्त कर ली गई। उन पर 500 रुपए का इनाम भी घोषित किया गया। पर वे लगातार गोरिल्ला युद्ध करते रहे। वे अंत में उसी के दौरान शहीद हो गये, यह पता नहीं चल सका है।

राजा अर्जुन सिंह गोंड- ये फतेहपुर के जागीरदार थे। इनके पिता श्री जालिम सिंह गोंड बुंदेला क्रांति के नायक थे। श्री अर्जुन सिंह गोंड ने क्रांतिकारी तात्याटोपे की उस समय सहायता की जब वे नर्मदा पार कर दक्षिण भी ओर जा रहे थे। उनके साथ धारा सिंह गोंड, सूरा गोंड, दरयाब गोंड, देवचंद्र गोंड एवं मन्साराम गोंड 1857 की क्रांति में शामिल रहे। इनका बाद का विवरण अप्राप्त है।

श्री देवी सिंह गोंड- नन्हीं खेड़ा कटंगी जबलपुर के माल गुजार ने मई 1857 में अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध प्रारंभ कर दिया। शाहपुर, जबेरा, संग्रामपुर कटंगी पर उनका अधिकार हो गया। उनके साथ जबलपुर की बावनवीं पलटन के विद्रोही भी शामिल हो गये। उनके पुत्र गिरवर सिंह ने अम्बादानी के नवाब मोहम्मद खान के साथ मिलकर राहतगढ़ के किले पर अधिकार कर लिया था। इससे अधिक विवरण उपलब्ध नहीं हो सका।

उपरोक्त के अतिरिक्त चौका के जागीरदार उम्मेद सिंह गोंड, सागर के ग्राम छुटा के परशुराम गोंड शाहगढ़ के स्वरूप सिंह, पाटोर ग्राम के जोधन सिंह गोंड (बानपुर के राजा मर्दन सिंह क्रांतिकारी के साथी) एवं टापरू भोई थे ये विवाह के तत्काल बाद 1857 की क्रांति में शहीद हुए थे। लोटिया भोई तामिया छिंदवाड़ा, इमरत भोई कोडावाला, इसरत भोई सरयाम, गंजन सिंह कोरकू, रेनोबाई, बिरजू भोई, बादल भोई आदि जनजातीय वर्ग के वीरों ने 1857 की क्रांति में भाग लेकर वीरगति प्राप्त की।

सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के जनजातीय सेनानी :-

गोंड राजा दिलहन शाह, राजा महीपाल सिंह, राजा गंगाधर गोंड राजा अर्जुन सिंह गोंड, राजादेवी सिंह गोंड, राजा भगवान सिंह गोंड, अमर सिंह गोंड, परशुराम गोंड, जीवन सिंह गोंड, लल्लन गोंड, सरवर सिंह गोंड, दुलारे गोंड, दल्ला गोंड, राजा अमान सिंह गोंड, बकस भाऊ गोंड, गुलाब पुढारी, इमरत भोई उत्पाती, अमरू भोई, सहरा भोई, झंका भोई, टापस भोई, लोटिया भोई, इमरत भोई कोंडावाला, इमरत भोई सरयाम, गंजन सिंह कोरकू, रेनो बाई, बिरजू भोई, बादल भोई उपरोक्त सभी स्वतंत्रता सेनानी आज जनमानस के लिए आदरणीय है तथा उन्हें श्रद्धांजति अर्पित है। उनके त्याग और बलिदानको भारत सदा याद रखेगा।

जबलपुर के मंगल पांडे श्री रिपुदमन सिंह :- देश में सन् 1857 की क्रांति में जबलपुर के ब्रिटिश सेना के सिपाही चुप नहीं बैठ सके। 15 जून 1857 की परेड के दौरान उन्होंने एज्जुटेंट पर बंदूक से प्रहार किया। बंदूक नहीं चली पर एज्जुटेंट घायल हो गया। दूसरे प्रहार के पहले उन्हें ब्रिटिश सैनिकों ने पकड़ लिया। उन्हें इलाहाबाद ले जाया गया। जहाँ उन्हें पागल घोषित करते हुए फांसी दे दी गई। पागल को फांसी नहीं दी जाती पर ब्रिटिश सत्ता में कानून की बात बेमानी थी। यह वाक्या गजेटियर में दर्ज है। नाम लेखक ने दिया है।

अध्याय-26

क्रांतिकारी बाला साहेब देश पाण्डे

देश विभाजित स्वतंत्रता प्राप्त कर चुका था। तत्कालीन मध्यप्रांत एवं बरार के मुख्यमंत्री पं. रविशंकर शुक्ल प्रान्तव्यापी दौरे पर थे। जब वे जशपुर पहुँचे तो वहाँ उन्हें आश्चर्यजनक परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। उनके काफिले पर पत्थर बरसने लगे, वहाँ भारी भीड़ नारे लगा रही थी- 'इंडियन डाग्स गोबेक' सभी तरफ काले झंडे फहरा रहे थे। मुख्यमंत्री के साथ पर्याप्त पुलिस नहीं थी, विवश उन्हें वापस लौटना पड़ा। उस समय प्रान्त में कांग्रेस का शासन था। वर्तमान मध्यप्रदेश अस्तित्व में नहीं था। मध्यप्रांत एवं बरारकी राजधानी नागपुर थी। मुख्यमंत्री नागपुर लौटे। उन्होंने गांधीवादी नेता ठक्कर बापा को सलाह के लिए बुलाया। बापा ने कहा कि जशपुर सहित सम्पूर्ण क्षेत्र मिशनरियों के आधिपत्य में था, वहाँ राष्ट्रवादी विचारधारा का अभाव था। इस समस्या का निदान उनके अनुसार राष्ट्रवादी संगठन था। उनका इशारा राष्ट्रीय स्वयंसेक संघ की तरफ था। मुख्यमंत्री पं. रविशंकर शुक्ल कांग्रेसी थे, पर समझ गये। उस समय स्थिति विकट थी। गांधी जी की हत्या के कारण आरएसएस पर बंदिश लगी थी। पर उसी से सहायता की आशा भी थी। अंततः ठक्कर बापा को मध्यस्थ बनाया गया। उन्होंने आरएसएस प्रमुख से बात की। मुख्यमंत्री से भी संवाद हुआ। आरएसएस प्रमुख ने समस्या के समाधान के लिये सहमति व्यक्त करते हुए दो वर्ष का समय मांगा। प्रशासन की ओर से समय एवं सुविधाएँ प्रदान की गई। उस समय संघ कार्यकर्ताओं के साथ बाला साहब देशपाण्डे के लिए भी गिरफ्तारी वारंट जारी था। पर राजनीतिक खेल से परे मुख्यमंत्री ने संघ प्रमुख द्वारा बाला साहब देशपांडे के नेतृत्व में गठित 'मिशन जशपुर' टीम को हरी झंडी दी तथा वह टीम संसाधनों के साथ जशपुर एवं झारखंड पहुँच गई।

श्री देशपांडे का जन्म सामान्य मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। उनके पिता जेलर थे। उनकी शिक्षा नागपुर में हुई थी। वहीं पर संघ मुख्यालय था। श्री देशपांडे संघ की शाखाओं में नियमित रूप से जाते थे। उन्होंने एमए, एलएलबी तक पढ़ाई की थी तथा रामटेक में वकालत शुरू कर दी थी। पर संघ के वे कर्मठ कार्यकर्ता बने रहे। सन् 1942 के 'अंग्रेजों भारत छोड़ों' आंदोलन में उन्होंने सक्रियता में भाग लिया तथा रामटेक की सरकारी इमारत में यूनियन जैक उतारकर तिरंगा झंडा फहरा दिया। बाद में गिरफ्तार हुए तथा जेल भेज दिये गये। उन पर संगीन जुर्म लगाकर उन्हें फांसी के तख्ते तक पहुँचाने की व्यवस्था ब्रिटिश शासन ने कर रखी थी। पर सबूत के अभाव में उन्हें अदालत ने छोड़ दिया। तबसे वे बराबर स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रहे। संघ प्रमुख उनकी योग्यता तथा निष्ठा से परिचित थे। इसीलिए उन्हें मिशन जशपुर का प्रभारी बनाया गया था।

बाला साहब ने प्रभार ग्रहण करते ही ठक्कर बापा से कहा कि उन्हें शासन द्वारा 8 पाठशालाओं को प्रारंभ करने की नहीं अपितु प्रथम वर्ष में ही क्षेत्र में 100 पाठ शालाएँ खोलने की अनुमति चाहिए। इस पर बापा बोले- 'बाला यह अत्यंत कठिन होगा। संपूर्ण क्षेत्र में मिशनरी के स्कूल चल रहे हैं तुम 8 पाठ शालाएँ ही खोल लो तो काफी होगा।' पर देश पांडे नहीं माने उन्होंने कहा- आप 100 की अनुमति दिलाएँ फिर साल भर बाद आकर देखना कि क्या हुआ-'बापा मान गये उन्होंने शासन से अनुमति दिला दी। कठिन परिश्रम, प्रतिरोध एवं हमलों को झेलकर भी 10 महीनों में बाला साहब ने 100 पाठ शालाएँ खोल ही नहीं दी' अपितु कुशलता के साथ अनुकूल स्थिति में उन्हें चलाकर भी दिखा दिया। जब सन् 1949 में ठक्कर बापा पं. शुक्ल तत्कालीन मुख्यमंत्री के साथ जशपुर पहुँचे तो वहाँ पत्थर, काले झंडे एवं गो बैक के नारे नहीं अपितु भारत माता की जय के नारे गूंज रहे थे। पं. शुक्ल पर फूल बरस रहे थे। यह देशपांडे के परिश्रम का परिणाम था। स्वागत के लिए पुष्प वर्षा हो रही थी, भारत माता की जय के नारे गूँज रहे थे, हजारों बच्चे युवा बुजुर्ग स्वागत के लिए खड़े थे। ठक्कर बापा एवं मुख्यमंत्री भाव विभोर हो गये। बापा ने अपनी जेब से 100 रुपए का नोट निकाल कर देशपांडे

जी को दिया। मुख्यमंत्री ने तत्काल 100 और पाठशालाएँ प्रारंभ करने का आदेशर जारी किया। इस तरह झारखंड क्षेत्र में राष्ट्रीयता की धारा प्रवाहित होने लगी। मिशन टीम का षड़यंत्र एवं एकाधिकार समाप्त हुआ।

देश में जब इमरजेंसी लगाई गई तब श्री देशपांडे को जेल में बंद कर दिया गया। जेल में रहते हुए भी वे जेल बंदियों की सहायता तथा समस्या समाधान करते रहे। आपातकाल के बाद भी वे संघ के कार्यकर्ता के रूप में जनसेवा में लगे रहे। जीवन भर वे जशपुर में ही रहे। अंत में 21 अप्रैल 1995 को 82 वर्ष की आयु में उन्होंने देह त्याग दी तथा गोलोक धाम चले गये।

सेंट्रल जेल जबलपुर की दीवार फांद कर मुक्त हुए महासिंह कोल :-

सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में गाड़ाघाट पाटन के जागीरदार ठाकुर जवाहर सिंह दुबे की सेना के योद्धा महासिंह कोल एवं पंडित रामनिवाज चौबे को गिरफ्तार कर जेल में बंद कर दिया गया। जब महासिंह कोल को फांसी पर चढ़ाया जाने लगा तब उन्होंने एक क्षण के लिए देवी माँ की प्रार्थना की अनुमति मांगी, अनुमति मिली एक पुलिस सार्जेंट उनके पीछे खड़ा हो गया। वे प्रार्थना करने लगे। अचानक उन्होंने पुलिस अधिकारी पर छलांग लगाई तथा उसके कंधों पर चढ़ते हुए, उसकी गर्दन तोड़ते हुए जेल की 15 फुट ऊंची दीवार फांदकर फरार हो गये फिर वे कभी भी ब्रिटिश पुलिस की पकड़ में नहीं आए। जीवन पर्यन्त गोरिल्ला युद्ध करते रहे।

श्री राजकुमार गुप्ता लेखक का जन्म 3/11/1944 को जबलपुर के व्यापारी परिवार में हुआ था। विद्युत अनियांत्रिकी में पत्रोपाधि के पश्चात उन्होंने भारतीय रेल में विद्युत निरीक्षक के रूप में सेवा प्रारंभ की। पश्चात स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेकर पत्रकारिता में कदम रखे। उन्होंने जबलपुर में दैनिक भास्कर, हिन्दी एक्सप्रेस, टी.व्ही. चैनल सिटी न्यूज, जे न्यूज, सी टाइम्स आदि में कालमिस्ट एवं संपादक के रूप में कार्य किया। आकाशवाणी जबलपुर एवं भोपाल से उनकी संबद्धता रही है। दूरदर्शन भोपाल सहित कई राष्ट्रीय चैनलों में उन्होंने भाग लिया हैं। वे श्रमजीवी पत्रकार परिषद के प्रदेश उपाध्यक्ष भी हैं। साथ ही वेस्ट सेन्ट्रल रेलवे कांट्रेक्ट लेबर संघ के महामंत्री भी है। उन्होंने 15 पुस्तकें लिखी हैं। जिनमें से 12 प्रकाशित हो चुकी हैं। उनके नाम इस प्रकार है- (1) गोंड शासकों की जल प्रबंधन योजना, (2) रेवातट का संगमरमरी कैलाश, (3) दि ग्रेट गोंड सम्राट संग्राम शाह, (4) पुलिस यात्रा, (5) बलिदानी माटी, (6) पृथ्वीराज चौहान, (7) गोंड कालीन जलप्रबंधन, (8) जंगे आजादी के यादगार पल, (9) माँ नर्मदा एवं योगिनी तंत्र, (10) बालाघाट की बलिदानी रानी तिलकावती, (11) माँ मक्रवाहिनी नर्मदा, (12) भोपाल की वीरांगना रानी कमलापती हैं। शेष प्रकाशनाधीन है। लेखक के परिवार में पत्नी श्रीमती प्रभा गुप्ता पुत्री डॉ. रश्मि खरया, डॉ. राखी गुप्ता, रोली गुप्ता एवं पुत्र राहुल गुप्ता तथा रवि गुप्ता है।

- महेश सक्सेना

संचालक, बाल साहित्य अकादमी, भोपाल

प्रकाशक

साहित्य अकादमी

मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, मध्यप्रदेश शासन

संस्कृति विभाग, भोपाल